तृतीय वर्ष कला

सत्र - VI (CBCS)

प्रश्नपत्रिका क्र. VII

साहित्य समीक्षा : छंद एवं अलंकार

(LITERARY CRITICISM: PROSODY & RHETORICS)

विषय कोड: UAHIN-604

© UNIVERSITY OF MUMBAI

प्राध्यापक डॉ. डी. टी. शिर्के
प्रभारी कुलगुरू
मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

प्राचार्य. डॉ. अजय भामरे
प्रभारी प्र-कुलगुरू
मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

प्राध्यापक प्रकाश महानवर
संचालक
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था
मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

प्रकल्प समन्वयक : **प्रा. अनिल आर. बनकर**
सहयोगी प्राध्यापक
इतिहास विभाग एवं कला शाखा- प्रमुख,
दूर व मुक्त अध्ययन संस्था, मुंबई विद्यापीठ, मुंबई

अभ्यास समन्वयक एवं संपादक : **डॉ. अनिल गो. चौधरी**
सहायक प्राध्यापक,दूर व मुक्त अध्ययन संस्था,
मुंबई विश्वविद्यालय, कलिना, सांताक्रुज (ई), मुंबई - 400 098

लेखक : **प्रा. दिनेश पाठक**
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
एस.आय.ई.एस. कला, विज्ञान और वाणिज्य महाविद्यालय,
सायन्स (प), मुंबई - ४०० ०२२

: **डॉ. अर्चना दुबे**
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
केलकर एज्युकेशन ट्रस्ट, कला, विज्ञान एवं वाणिज्य
महाविद्यालय, मिठागर रोड, मुलुंड (पूर्व), मुंबई - ४०० ०८१

एप्रिल २०२३, मुद्रण - १

प्रकाशक : **संचालक, दूर आणि मुक्त अध्ययन संस्था.**
मुंबई विद्यापीठ,
विद्यानगरी, मुंबई- ४०० ०९८.

अक्षर जुळणी एवं मुद्रण
मुंबई विद्यापीठ मुद्रणालय
विद्यानगरी, मुंबई

अनुक्रमणिका

अध्याय क्र.	नाव	पृष्ठ क्र.
१	शब्दशक्ति	१
२	रस	९
३	रस के भेद	१५
४	गद्यविधा: गद्य के विविध रूप	२५
५.	अलंकार सामान्य परिचय, लक्षण एवं उदाहरण	४१

तृतीय वर्ष कला

सत्र - VI (CBCS)

अभ्यासपत्रिका क्र. - VII

साहित्य समीक्षा : छंद एवं अलंकार

LITERARY CRITICISM:PROSODY & RHETORICS

SYLLABUS

NAME OF PROGRAM	T. Y. B. A. (C.B.C.S.) VII
NAME OF THE COURSE	T.Y.B.A. HINDI
SEMESTER	VI
PAPER NAME	LITERARY CRITICISM:PROSODY & RHETORICS, साहित्य समीक्षा : छंद एवं अलंकार
PAPER NO.	VII
COURSE CODE	UAHIN–604
LACTURE	60
CREDITS & MARKS	CREDITS - 4 & MARKS - 100

साहित्य समीक्षा

इकाई– I शब्द शक्ति–

- शब्द शक्ति : अर्थ, परिभाषा और स्वरूप
- शब्द शक्ति के प्रकार : (अभिधा, लक्षणा एवं व्यंजना का सामान्य परिचय)

इकाई– II रस–

- रस : अर्थ, परिभाषा एवं स्वरूप
- रस के अवयव
- रस के भेद : सामान्य परिचय

इकाई– III गद्य के विविध रूप–

- उपन्यास : परिभाषा, स्वरूप एवं प्रमुख तत्व
- कहानी : परिभाषा, स्वरूप एवं प्रमुख तत्व
- रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी और आत्मकथा का तात्विक विवेचन

इकाई– IV अलंकार सामान्य परिचय, लक्षण एवं उदाहरण–

- शब्दालंकार:– 1. अनुप्रास 2. यमक 3. श्लेष 4. वक्रोक्ति 5. वीप्सा 6. पुनरुक्ति प्रकाश
- अर्थालंकार:– 1. उपमा 2. रूपक 3. अतिशयोक्ति 4. उत्प्रेक्षा 5. विभावना 6. प्रतीप 7. दीपक 8. संदेह 9. विरोधाभास

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. रस सिद्धांत – डॉ. नगेंद्र, नेशनल पब्लिकेशन हाऊस, एडिशन
2. काव्यशास्त्र – भगीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
3. भारतीय काव्यशास्त्र : नई व्याख्या – डॉ.राममूर्ति त्रिपाठी, साहित्य भवन प्रा. लि. इलाहाबाद
4. हिंदी साहित्य समीक्षा – श्रीमूर्ति सुब्रह्मराय, हिंदी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग
5. साहित्य समीक्षा – रामरतन भटनागर, किताब महल, इलाहाबाद
6. साहित्य समीक्षा – कालिदास कपूर, इंडियन प्रेस लिमिटेड, प्रयाग
7. कला की ज़रूरत – राजकमल प्रकाशन–अन्सर्ट फिशर, अनुवाद – रमेश उपाध्याय
8. हिंदी का गद्य पर्व – नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
9. आलोचना और विचारधारा नामवर सिंह –आशीष त्रिपाठी (संपा.), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
10. हिंदी आलोचना का दूसरा पाठ – निर्मला जैन, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
11. आचार्य रामचंद्र शुक्ल : आलोचना के नए मानदंड –भवदेय पांडेय, राजकमल प्रकाशन,दिल्ली
12. हिंदी आलोचना का विकास – मधुरेश, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
13. सांस्कृतिक आलोचना और हजारीप्रसाद द्विवेदी –सं.रामकिशोर त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
14. भारतीय काव्यशास्त्र के नये क्षितिज – राममूर्ति त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
15. हिंदी समीक्षा और आचार्य शुक्ल नामवर सिंह – सं.ज्ञानेंनद्र कुमार संतोष, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली
16. काव्य परिचय – राजेंद्र प्रसाद श्रीवास्तव, पुस्तक संस्थान 109/ 50–ए, नेहरूनगर, कानपुर
17. काव्यशास्त्र के मानदंड – रामनिवास गुप्त, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
18. भारतीय काव्य विमर्श – राममूर्ति त्रिपाठी, वाणी प्रकाशन, दिल्ली
19. साहित्यालोचन के सिद्धांत – रवींद्र कुमार जैन, नेशनल पब्लिकेशन हाऊस, दिल्ली
20. पाश्चात्य काव्यशास्त्र : इतिहास, सिद्धान्त और वाद – डॉ. भगीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय, प्रकाशन, वाराणसी
21. शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत (द्वितीय भाग) – गोविंद त्रिगुणायत, एस चंद एंड कंपनी (प्रा.) लि. रामनगर, नई दिल्ली
22. काव्य के तत्व – आचार्य देवेंद्रनाथ शर्मा – लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
24. साहित्य विवेचन – क्षेमचंद्र 'सुमन', योगेंद्र कुमार मल्लिक, आत्माराम एंड संस, दिल्ली
25. साहित्य–विविधा – रमेशचंद्र लवानिया – अमित प्रकाशन,गाजियाबाद
26. हिन्दी ग़ज़ल और ग़ज़लकार –डॉ. मधु खराटे,साहित्य रत्नाकर,कानपुर
27. ग़ज़ल का काव्यशास्त्र–डॉ.महेश गुप्ता,साहित्य रत्नाकर,कानपुर

नमूना प्रश्न पत्र

Semester – VI Course –VII

अवधि : 03:00 घंटे पूर्णांक : 100

सूचना : 1. सभी प्रश्न अनिवार्य हैं।
2. सभी प्रश्नों के लिए समान अंक हैं।

प्रश्न 1. शब्द शक्ति का अर्थ समझाते हुए लक्षणा और व्यंजना शब्दशक्ति का सोदाहरण परिचय दीजिए। 20

अथवा

शब्द शक्ति की परिभाषा देते हुए उसके प्रमुख प्रकारों का सोदाहरण परिचय दीजिए।

प्रश्न 2. रस की परिभाषा देते हुए उसके विभिन्न अवयवों का सोदाहरण परिचय दीजिए। 20

अथवा

रस की विभिन्न परिभाषाओं की चर्चा करते हुए करुण एवं शांत रस का सोदाहरण परिचय दीजिए।

प्रश्न 3. पाश्चात्य मान्यताओं के आधार पर कहानी के तत्त्वों की चर्चा कीजिए। 20

अथवा

जीवनी का अर्थ समझाते हुए उसके प्रमुख तत्वों का विवेचन कीजिए।

प्रश्न 4. अनुप्रास तथा श्लेष अलंकारों के लक्षण स्पष्ट करते हुए उनके उदाहरण लिखिए। 20

अथवा

दीपक तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों के लक्षणों को समझाते हुए उनके उदाहरण लिखिए।

प्रश्न 5. किन्हीं दो विषयों पर टिप्पणियाँ लिखिए। 20

क) अभिधा शक्ति और उसका महत्व

ख) शृंगार रस

ग) उपन्यास के तत्व

घ) उपमा अलंकार लक्षण एवं उदाहरण

१

शब्दशक्ति

इकाई की रूपरेखा

१ .० इकाई का उद्देश्य

१.१ प्रस्तावना

१.२ शब्दशक्ति की परिभाषा

१.३ शब्दशक्ति का स्वरूप

१.४ शब्दशक्ति के प्रकार

१.५ सारांश

१.६ बोध प्रश्न

१.७ टिप्पणियाँ

१.८ संदर्भ ग्रंथ

१.० इकाई का उद्देश्य:-

प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत विद्यार्थी निम्नलिखित बिंदुओं का अध्ययन करेंगे -

- विद्यार्थी शब्दशक्ति के विविध रूपों से परिचित होंगे।
- विद्यार्थी शब्दशक्ति के लक्षणों व उदाहरणों से परिचित होंगे।
- विद्यार्थी शब्दशक्ति के विविध रूपों में अंतर करते हुए उनका प्रयोग कर सकेंगे।

१.१ प्रस्तावना :-

प्रस्तुत इकाई शब्दशक्ति के विविध भेदों और उपभेदों से विद्यार्थी को परिचित करायेगी। शब्दशक्ति के महत्व को समझते हुए विद्यार्थी उसके काव्यगत मूल्य व प्रयोग को समझ सकेगा तथा उस शब्दशक्ति के विभिन्न भेदों का प्रयोग कविता को रचते व पढ़ते हुए कर सकेगा। शब्द व अर्थ के परस्पर संबंध को समझने की स्पष्ट दृष्टि का विकास विद्यार्थी में होगा।

१.२ शब्दशक्ति की परिभाषा:

शब्द एवं अर्थ के संबंध में विचार करनेवाले तत्व को शब्दशक्ति कहा जाता है। शब्दशक्ति द्वारा शब्द के अर्थ का बोध या ज्ञान होता है, अतएव शब्दशक्ति को परिभाषित करते हुए ऐसा भी कहा जा सकता है कि जिस शक्ति या व्यापार द्वारा अर्थबोध होता है उसे शब्दशक्ति कहते हैं।

आचार्य चिंतामणि लिखते हैं, “जो सुनि पड़े सो शब्द है, समुझि परै सो अर्थ” अर्थात जो सुनाई पड़ता है वह शब्द है और जो समझ पड़ता है वह अर्थ है। शब्द से अर्थ की प्राप्ति कैसे होती है? इसी तत्व पर शब्दशक्ति विचार करती है।

१.३ शब्दशक्ति का स्वरूप:-

शब्दशक्ति शब्द और अर्थ के संबंध पर विचार करती है। इसीलिए संस्कृत काव्यशास्त्र में ‘शब्दार्थ - संबंध शक्ति’ कहा गया है। शब्दशक्ति शब्द के अर्थ पर विचार करनेवाली शक्ति है। अतः जितने तरह के शब्द होते हैं उतनी तरह की शक्तियाँ भी होती है। शब्द तीन तरह के होते है इसलिए शब्दशक्तियाँ भी तीन तरह की होती हैं। ये तीन शब्दशक्तियाँ तीन अलग-अलग तरह के अर्थों का बोध कराती हैं। इस तथ्य को निम्मलिखित तालिका के द्वारा समझा जा सकता है।

	शब्द	अर्थ	शब्दशक्ति
१	वाचक	वाच्यार्थ	अभिधा
२	लक्षक	लक्ष्यार्थ	लक्षणा
३	व्यंजक	व्यंग्यार्थ	व्यंजन

शब्दशक्तियाँ उपर्युक्त तीन प्रकार के शब्दों से प्राप्त होनेवाले अर्थों के बोध या ज्ञान से संबंध रखती हैं।

१.४ शब्दशक्ति के प्रकार :-

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि शब्दशक्तियों के तीन भेद हैं -

१) अभिधा

२) लक्षणा

३) व्यंजना

ये तीनों शब्दशक्तियाँ अलग-अलग तरह के शब्दों से जुड़ी हैं और तीन अलग-अलग तरह के अर्थों का बोध कराती हैं। इन शब्दशक्तियों का विस्तृत विवरण निम्नवत है-

१ .४.१ अभिधा :

अभिधा, शब्द की पहली शक्ति है। यह शब्द के साक्षात सांकेतिक अर्थ को बताती है। अभिधा को परिभाषित करते हुए आचार्य मम्मट कहते है, “जिसके द्वारा शब्द के साक्षात् सांकेतिक अर्थ की प्रतीति अर्थात् ज्ञान होता है, वह अभिधा पद शक्ति है।

आचार्य अप्पय दीक्षित अभिधा को परिभाषित करते हुए कहते हैं, “वस्तु का साक्षात बोध कराने वाली शक्ति का नाम ही अभिधा है।”

पंडितराज जगन्ननाथ अभिधा को परिभाषित करते हुए कहते है, “अर्थ का शब्द के साथ और शब्द का अर्थ के साथ स्थित प्रत्यक्ष संबंध ही अभिधा है।” सभी अर्थों का मुख होने के कारण इसे मुख्य भी कहते हैं। आचार्य मुकुल भट्ट का कहना है कि जैसे शरीर के सभी अवयवों में सबसे पहले मुख दिखाई पड़ता है, उसी तरह सभी प्रकार के अर्थों में सबसे पहले इसी अर्थ का बोध होता है। इसीलिए, मुख की तरह मुख्य होने के कारण इसे अन्य सभी प्रतीत होने वाले अर्थों का मुख कहा जाता है। अभिधा की विशेषता को रेखांकित करते हुए आचार्य सोमनाथ लिखते हैं -

या अक्षर को यह अरथ ठीकहिं ये ठहराय ।

जानि परै जातैं सु वह अभिधावृत्ति कहाय ॥

अभिधा को शब्द की मुख्य शक्ति मानते हुए आचार्य कवि देव कहते हैं -

अभिधा उत्तम काव्य है, मध्य लक्षनानील।

अधम व्यंजन रस विरस उलटी कहत नवीन॥

आचार्य कवि देव अभिधा में रचे गए काव्य को उत्तम काव्य मानते हैं।

अभिधा शक्ति से जिन वाचक शब्दों का अर्थबोध होता है, उनके तीन भेद हैं –

I) रूढ़

II) यौगिक

III) योगरूढ़ि

I) **रूढ़:-** रूढ़ या रूढ़ि शब्द वे हैं जिनकी व्युत्पत्ति संभव नहीं। ये शब्द एक समुदाय के रूप में अपने अर्थ की प्रतीति करते हैं। जैसे घड़ी, चश्मा, शेर, कुत्ता, मकान इत्यादि |

II) **यौगिक :-** यौगिक शब्द वे है जिनकी व्युत्पत्ति की जा सकती है। इन शब्दों का अर्थ व्युत्पत्ति के द्वारा ही स्पष्ट हो पाता है। जैसे भूपति शब्द की व्युत्पति ‘भू + पति’ है। ‘भू’ का अर्थ है पृथ्वी और ‘पति’ का अर्थ है स्वामी या मालिक। इस तरह भूपति शब्द का अर्थ होगा - पृथ्वी का स्वामी या मालिक। नरपति, पाचक, सुधांशु इत्यादि शब्द यौगिक शब्द ही हैं। व्युत्पत्ति द्वारा ही इनके अर्थों का बोध हो पाता है।

III) **योगरूढ़ि :-** योगरूढ़ि शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है - योग और रूढ़ि। यह अपने आप में ही दो गुणों के बारे में सूचित करता है- अर्थात योगरूढ़ि शब्द वे शब्द है जो यौगिक तो होते हैं किंतु ऊनका अर्थ रूढ़ होता है। इन शब्दों की व्युत्पत्ति करने पर व्युत्पत्तिगत शब्दों के अर्थ अलग निकलते हैं पर उनका अर्थ पहले से ही रूढ़ (पूर्वनिर्धारित) होता है। जैसे पंकज शब्द की व्युत्पति करने पर ‘पंक+ज’ यह रूप हमारे सामने आता है। ‘पंक’ का अर्थ होता है कीचड़ और ‘ज’ का अर्थ होता है जन्म लेनेवाला | इस प्रकार इसका शब्द का व्युत्पत्तिपरक अर्थ होगा कीचड़ में जन्म लेनेवाला। यदि हम इस अर्थ को लें तो कीचड़ में जन्म लेने वाले सेवार, काई, घोंघा, कमल इत्यादि सभी पंकज हैं। किंतु यह अर्थात पंकज शब्द के लिए कमल अर्थ पहले से रूढ़ कर दिया गया है। इसीलिए ऐसे शब्दों को योगरूढ़ि शब्द कहा जाता है। अन्य योगरूढ़ि शब्द है - पशुपति, जलज, पयोद, चंद्रमौलि इत्यादि |

१ .४.२ लक्षणा :

शब्द का अर्थ केवल अभिधा शक्ति तक ही सीमित नहीं होता। जब शब्द के मुख्य अर्थ वाच्यार्थ को समझने में बाधा आती है तब रूढ़ि या प्रयोजन के आधार पर हम दूसरे अर्थ को लगाते हैं। इस अर्थ का निर्धारण वक्ता के प्रयोग के आधार पर होता है। इस दूसरे अर्थ को लाक्षणिक अर्थ कहा जाता है। इस लाक्षणिक अर्थ को व्यक्त करनेवाली शब्द की शक्ति का नाम है लक्षणा तथा ऐसे शब्द लक्षक शब्द कहलाते हैं।

आचार्य मम्मट लक्षणा के स्वरूप को निर्धारित करते हुए अपने ग्रंथ 'काव्यप्रकाश' में लिखते हैं –

मुख्यार्थबाधे तद्योगे रूढ़ितोऽय प्रयोजनात्।

अन्येऽर्थो लक्ष्यते यत् सा लक्षणारोपिता क्रिया ||

अर्थात मुख्य अर्थ में बाधा उत्पन्न होने पर, मुख्य अर्थ के साथ लक्ष्य अर्थ का संबंध होने पर रूढ़ि अथवा प्रयोजन विशेष के आधार पर जिस शब्दशक्ति के द्वारा अन्य अर्थ का बोध होता है वह शब्द का आरोपित व्यापार लक्षणा है।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट होता है की लक्षणा व्यापार के संपन्न होने के लिए तीन बातें आवश्यक हैं -

I) मुख्य अर्थ में बाधा का आना |

II) मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ का योग (संबंध) |

III) रूढ़ि या प्रयोजन |

I) मुख्य अर्थ में बाधा का आना :- शब्द के मुख्य अर्थ की प्रतीति में जब बाधा पड़ती है, अथवा जब यह पता चले कि वक्ता जिस अर्थ को व्यक्त करना चाहता है वह अर्थ अभिधा शब्दशक्ति से व्यक्त नहीं हो पा रहा है तब इस स्थिति को हम मुख्य अर्थ में बाधा कहते हैं।

II) मुख्य अर्थ और लक्ष्यार्थ का योग :- मुख्य अर्थ में बाधा उत्पन्न होने के बाद वक्ता के प्रयोजन के आधार पर शब्द का जो दूसरा अर्थ ग्रहण किया जाता है उसका मुख्य अर्थ के साथ संबंध होना आवश्यक है। इस स्थिति को मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ का योग कहते हैं।

III) रूढ़ि या प्रयोजन :- रूढ़ि शब्द का अर्थ है किसी विशेष प्रकार से कहने का ढंग या तरीका या अभिप्राय इसी तरह प्रयोजन का अर्थ हुआ किसी विशेष उद्देश्य को लेकर शब्द का प्रयोग। शब्द के मुख्यार्थ में बाधा पड़ने के बाद इसी रुढ़ि या प्रयोजन के आधार पर शब्द का दूसरा अर्थ लगाया जाता है। यह दूसरा अर्थ लाक्षणिक होता है। जैसे जब एक मित्र दूसरे मित्र को यह कहता है कि - 'तुम पूरे गधे हो' तब यहाँ गधे शब्द का प्रयोग एक विशेष प्रयोजन को ध्यान में रखकर किया गया होता है। यहाँ प्रयोग किए गए शब्द गधे पर जब हम ध्यान देते हैं तब प्रश्न उठता है कि भला मनुष्य गधा कैसे हो सकता है? ऐसे में यहाँ मुख्यार्थ में बाधा उत्पन्न होती है क्योंकि मनुष्य और गधा दोनों अलग है। ऐसे में हम गधे शब्द के प्रयोग के पीछे वक्ता के प्रयोजन पर ध्यान देते हैं तब पता चलता है कि वक्ता गधे शब्द का प्रयोग मुर्खता के प्रयोजन को ध्यान में रखकर

कर रहा है और यही अर्थ गधे शब्द के साथ रूढ़ कर दिया गया है। इस प्रकार बात स्पष्ट हो जाती है कि मित्र गधा कहकर दूसरे मित्र को मूर्ख कहना चाह रहा है।

इस प्रकार उपर्युक्त विश्लेषण में तीनों तत्वों का समावेश हमें मिलता है। मुख्यार्थ में बाधा पड़ने के बाद हम मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ के योग को तलाशते है और वक्ता के प्रयोजन के आधार पर गधे शब्द के लाक्षणिक अर्थ को समझ पाते हैं।

लक्षणा के भेद :-

काव्यशास्त्र के अलग-अलग विद्वानों ने लक्षणा के अलग- अलग भेद बताए हैं। आचार्य मम्मट ने प्रयोजनवती लक्षणा के छः भेद गिनाए हैं। आचार्य विश्वनाथ ने लक्षणा के सोलह भेद माने हैं। लक्षणा के विविध भेदों व उपभेदों को निम्नलिखित तालिका के माध्यम से समझा जा सकता है -

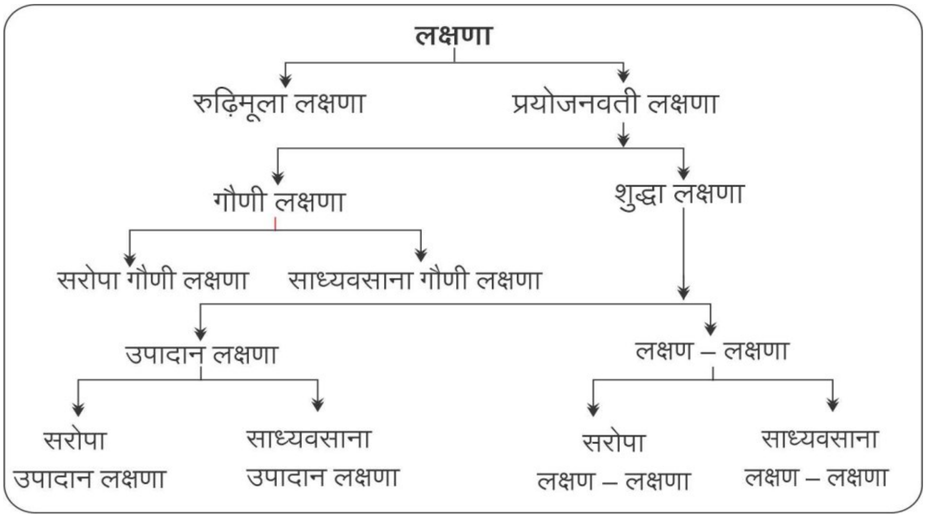

आचार्य मम्मट के अनुसार लक्षणा के निम्नलिखिते भेद है -

१) गौणी लक्षणा २) शुद्धा लक्षणा

३) उपादान लक्ष ४) लक्षण लक्षणा

५) सारोपा लक्षणा ६) साध्यवसाना लक्षणा

१) **गौणी लक्षणा -** जहाँ सादृश्यता अर्थात समान गुण या धर्म के कारण लक्ष्यार्थ की प्रतीति होती है वहाँ गौणी लक्षणा होती है। उदाहरण के रूप में 'मुखकमल' इस शब्द के द्वारा मुख्य अर्थ के बोध में बाधा उत्पन्न होती है क्योंकि मुख कमल नहीं हो सकता। किंतु यहाँ सादृश्यता के कारण अर्थात समान गुण के कारण लक्ष्यार्थ की प्रतीति हो जाती है। मुख का गुण कोमलता व सुंदरता है और कमल भी कोमल व सुंदर होता है। अतः मुख व कमल के बीच गुणों का साम्य होने के कारण लक्ष्यार्थ यह मिलता है कि मुख कमल के समान कोमल व सुंदर है। सादृश्यता के कारण यहाँ लक्ष्यार्थ की प्राप्ति हो रही है अतः यहाँ गौणी लक्षणा है।

२) **शुद्धा लक्षणा -** जहाँ सादृश्य-संबंध को छोड़कर किसी अन्य संबंध से लक्ष्यार्थ की प्रतीति होती है वहाँ शुद्धा लक्षणा होती है। ये अन्य संबंध है – आधाराधेय भाव संबंध, तात्कर्म्य संबंध, सामीप्य संबंध, कार्य कारण संबंध, अनादि संबंध इत्यादि।

३) **उपादान लक्षणा -** उपादान लक्षणा का दूसरा नाम अजहत्स्वार्थी लक्षणा भी है। जहाँ प्रयोजन- प्राप्त अर्थ की प्राप्ति के लिए अन्य अर्थ में ग्रहण किए जाने पर भी मुख्य अर्थ बना रहे वहाँ उपादान लक्षणा होती है।

४) **लक्षण - लक्षणा -** लक्षण - लक्षणा का दूसरा नाम जहत्स्वार्था लक्षणा भी है। यहाँ मुख्य अर्थ में बाधा आने पर प्रसंग के अनुसार मुख्य अर्थ का त्याग कर लक्ष्य अर्थ को ग्रहण किया जाता है वह लक्षण-लक्षणा होती है। अपने अर्थ को छोड़कर दूसरे अर्थ को ग्रहण करने के कारण ही इसे जहत्स्वार्था कहा जाता है।

५) **सारोपा लक्षणा -** लक्षणा के जिस रूप में विषयी (आरोप्यमाण) तथा आरोप के विषय दोनों का शब्दशः उल्लेख किया गया हो वहाँ सरोपा लक्षणा होती है। सारोपा लक्षणा में विषयी (उपमान) और विषय (उपमेय) दोनों का उल्लेख मिलता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि जिस लक्षणा में एक वस्तु में दूसरी वस्तु की अभेद - प्रतीति का आरोपण हो वह सारोपा लक्षणा होती है।

६) **साध्यवसाना लक्षणा -** आरोप के विषय का विषयी के द्वारा तिरोभूत कर लेना, अध्यवसान है। साध्यवसाना में विषयी अर्थात उपमान द्वारा विषय अर्थात उपमेय को आत्मसात कर लिया जाता है। आचार्य मम्मट साध्यवसाना लक्षणा के लक्षणों पर प्रकाश डालते हुए लिखते है – “आरोप्यमाण के द्वारा आरोप के विषय को निर्माण किये जाने पर साध्यवसाना लक्षणा होती है।”

इस प्रकार लक्षणा के उपर्युक्त छः भेदों की चर्चा की हैं । ये छः भेद आचार्य मम्मट द्वारा वर्णित है किंतु अन्य आचार्यों ने लक्षणा के अन्य अनेक भेद भी किए हैं।

१ .४.३ व्यंजना :-

व्यंजना शब्द की तीसरी शक्ति है। व्यंजना शब्द की निष्पत्ति करने पर ‘वि+अंजना’ ये दो शब्द मिलते हैं। इनमें ‘वि’ उपसर्ग है और ‘अंज’ प्रकाशन धातु है। आचार्यों ने इन दोनों शब्दों के अर्थ के आधार पर व्यंजन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए यह माना है कि व्यंजना अर्थात विशेष प्रकार का अंजन। आचार्यों का मानना है कि अंजन लगाने से नेत्रों की ज्योति बढ़ जाती है और विशेष प्रकार का अंजन लगाने से परोक्ष वस्तु भी दिखाई पड़ने लगती है। ठीक इसी तरह व्यंजना शब्द शक्ति से शब्दों के परोक्ष अर्थ भी दिखाई पड़ने लगते है या प्रकाशित होकर हमारी समझ में आने लगते हैं। जब अभिधा और लक्षणा शब्दशक्ति से काव्य के गूढ़ अर्थ नहीं समझ में आते तब वहाँ व्यंजना शब्द शक्ति की सहायता से काव्य के गूढ अर्थों को समझने की कोशिश की जाती है। व्यंजना शब्द शक्ति काव्य के गूढ सौंदर्य का उद्घाटन करती है। हमारे काव्य शास्त्रीय विद्वान इसी तरह सौंदर्य को ध्वन्यर्थ, प्रतियमान अर्थ, सूच्यर्थ आक्षेपार्थ भी संबोधित करते हैं।

व्यंजना शब्दशक्ति का काव्य में महत्वपूर्ण स्थान है। ध्वनिवादी आचार्यों का मानना है कि साहित्यशास्त्र की आधारशिला ही व्यंजन शब्दशक्ति पर आधारित है। आचार्य मम्मट व्यंजना के लक्षणों की चर्चा करते हुए कहते हैं - संकेत न होने के कारण जब अभिधा नामक शब्द-व्यापार समर्थ नहीं रहता और प्रयोजन की प्रतीति में हेतु अर्थात - मुख्य अर्थ का योग, रूढ़ि तथा प्रयोजन न मिलने के कारण लक्षणा भी अर्थबोध कराने में समर्थ नहीं होती तब व्यंजना के प्रयोग के अतिरिक्त और कोई शब्द व्यापार नहीं रह जाता।

व्यंजना शब्दशक्ति का सबसे चर्चित उदाहरण संस्कृत काव्यशास्त्र में - 'गंगाय घोषः' अर्थात 'गंगा में गाँव है' यह वाक्य है। गंगा एक नदी है और नदी में गाँव का होना संभव नहीं अतः अभिधा शब्दशक्ति से वाक्य का ठीक अर्थ नहीं निकलता ऐसे में फिर लक्षणा शब्दशक्ति का सहारा लेना आवश्यक प्रतीत होने लगता है। लक्षणा से प्रयोजन परक अर्थ निकलाने की कोशिश करने पर एक यह अर्थ निकलता है कि शायद वक्ता का अभिप्राय यह है कि गांव गंगा नदी के तट पर है। किंतु वक्ता का प्रयोजन यह नहीं है। ऐसे में वाक्य की तीसरी शक्ति बचती है और वह है व्यंजना | अभिद्या और व्यंजना से अर्थ की प्राप्ति नहीं हो पाने पर फिर व्यंजना शब्दशक्ति का हम प्रयोग करते हैं। व्यंजना शब्दशक्ति से वाक्य का वास्तविक अर्थ निकलता है और वह यह है कि 'गंगा में गाँव है' अर्थात गाँव गंगा नदी की तरह पवित्रता और शीतलता से भरा हुआ है। इस प्रकार वाक्य के पीछे दिये हुए अर्थ अर्थात पवित्रता और शीतलता के भाव का प्रकाशन व्यंजना शब्दशक्ति द्वारा ही संभव होता है। व्यंजना के स्वरूप पर आचार्य प्रताप सहि टिप्पणी करते हुए लिखते है –

> व्यंग्य जीव है कवित में, शब्द अर्थ गति अंग।
> सोई उत्तम काव्य है वरणै व्यंग्य प्रसंग ॥

व्यंजना के भेद :

व्यंजना शब्दशक्ति के दो मूल भेद हैं - १) शाब्दी व्यंजना २) आर्थी व्यंजना

शाब्दी व्यंजना के भी दो उप भेद मिलते हैं -

क) अभिधामूला शाब्दी व्यंजना ख) लक्षणामूला शाब्दी व्यंजना

१) **शाब्दी व्यंजना :** शाब्दी व्यंजना में शब्दों को प्रधानता व महत्व दिया जाता है। शब्दों के परिवर्तन के साथ अर्थ भी बदल जाते हैं। काव्य में प्रयुक्त अनेकार्थक शब्दों का अर्थ जब निश्चित हो जाता है तब शाब्दी व्यंजना कार्य करती है। अनेकार्थी शब्दों के विशेष अर्थ निश्चित हो जाने से इन शब्दों के अन्य अर्थ अवाच्य हो जाते हैं। अभिधा शब्दशक्ति उनके अर्थ को लेकर मौन हो जाती है और उनका वाच्यार्थ नहीं निकलता। ऐसे में अनेकार्थी शब्दों से वाच्यार्थ से अलग अर्थ का बोध होता है, इस अर्थ का बोध करानेवाली शक्ति को अभिधामूला शाब्दी व्यंजना कहते हैं। उदाहरण में निम्नलिखित वाक्य को देखा जा सकता है – 'शखचक्र युत हरि लसे' अर्थात शंख चक्र से युक्त हरि शोभायमान होते हैं। हरि शब्द के अनेक अर्थ होते है किंतु यहाँ अनेक अर्थ मौन हो जाते है और शंख चक्र के कारण हरि शब्द का अर्थ भगवान विष्णु ही निकलता है।

२) **आर्थी व्यंजना :** आर्थी व्यंजना में अर्थ महत्वपूर्ण भूमिका में होता है। इसमें अर्थ की सहायता से व्यंग्यार्थ का बोध होता है। जहाँ पर व्यंग्यार्थ का बोध किसी शब्द पर आधारित न होकर उसने अर्थ के आधार पर होता है वहाँ आर्थी व्यंजना होती है। आर्थी व्यंजना केवल केवल अर्थ की विशिष्टता के कारण ही अपने अर्थ का बोध करा पाती है। आर्थी व्यंजना के उदाहरण के रूप में निम्नलिखित दोहे को देखा जा सकता है -

> घर न कन्त हेमंत रितु, राति जागती जाति: ।
>
> दनकि द्यौस मौस सोका लगी, भली नहीं यह बात ॥

इस दोहे का वाच्यार्थ यह है कि एक सखी दूसरी सखी को समझाते हुए कहती है कि हे सखी तुम्हारा पति आजकल घर पर नहीं है ऋतु भी हेमंत है जिसमें प्राय शरीर स्वस्थ रहता है। ऐसे में तुम रात भर जागती रहती हो और दिन में छिपकर सोती हो यह अच्छी बात नहीं है। किंतु इस वाच्यार्थ से दोहे के वास्तविक अर्थ का ज्ञान नहीं होता। वास्तविक अर्थ उसमें छिपे व्यंग्यार्थ से स्पष्ट होता है और वह व्यंग अर्थ यह है कि सखी रात्रि भर इसलिए जगती है क्योंकि पति की अनुपस्थिति में सखी रात्रिभर अपने प्रेमी के साथ रमण करती हुई जगती है और दिन में छिपकर सोती है। सखी की ये आदत अच्छी बात नहीं है अर्थात ये अनैतिक निंदनीय व त्याज्य कर्म है। जिसे उसे तुरंत बंद कर देना चाहिए। इस प्रकार यहां व्यंग्यार्थ का बोध शब्द के आधार पर नहीं वरन् अर्थ के आधार पर होता है इसलिए यहाँ आर्थी व्यंजना है।

१.५ सारांश :

प्रस्तुत इकाई में छात्रो ने शब्द शक्ति का विस्तार से अध्ययन किया है | शब्द शक्ति के अर्थ का बोध होना तथा ज्ञान होता है, उसे देखा हैं | विशेषतः यहाँ पर शब्द शक्ति के अभिधा, लक्षणा और व्यंजना का विस्तार से अध्ययन किया गया हैं | ये तीनों शब्द शक्तियां अलग - अलग तरह के शब्दों से जुडी होती है और अलग - अलग तरह के अर्थों का हमें बोध कराती है |

१.६ बोध प्रश्न :

१. शब्दशक्ति के प्रकारों को उदाहरणों सहित विस्तार से स्पष्ट कीजिए |

२. शब्द्शक्ति में लक्षणा को विस्तार से लिखिए |

३. शब्दशक्ति में व्यंजना का सामान्य परिचय देकर भेदों को रेखांकित कीजिए |

४. शब्दशक्ति का अर्थ, परिभाषा और उसके स्वरुप पर प्रकाश डालिए |

१.७ टिप्पणियाँ :

१. शब्दशक्ति का स्वरुप

२. शब्दशक्ति में अभिधा

३. व्यंजना के भेद

१.८ संदर्भ ग्रंथ :

१. काव्यदर्पण - रामदाहिन मिश्र

२. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा - डॉ नगेन्द्र

३. वाङ्मय विमर्श - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

४. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र

५. भारतीय काव्यशास्त्र - डॉ योगेन्द्र प्रताप सिंह

❄❄❄❄❄❄❄

२

रस

इकाई की रूपरेखा

२.० इकाई का उद्देश्य

२.१ प्रस्तावना

२.२ रस का अर्थ

२.३ रस की परिभाषा

२.४ रस का स्वरूप

२.५ रस के अवयव या अंग

२.६ सारांश

२.७ बोध प्रश्न

२.८ टिप्पणियाँ

२.९ संदर्भ ग्रंथ

२.० इकाई का उद्देश्य :

प्रस्तुत इकाई के अन्तर्गत विद्यार्थी निम्नलिखित बिन्दुओं का अध्ययन करेंगे -

- विद्यार्थी रस के अर्थ, परिभाषा व स्वरूप से परिचित होंगे।
- विद्यार्थी रस के अवयवों से परिचित होंगे।
- विद्यार्थी रस के सामान्य भेदों से परिचित होंगे।

२.१ प्रस्तावना :

प्रस्तुत इकाई के द्वारा विद्यार्थीयों में रस के अर्थ, स्वरूप, उसके अवयवों व भेदों को लेकर बोध का निर्माण होगा। विद्यार्थी रस के विविध अवयवों या अंगों को समझकर उनकी वैज्ञानिकता व रस निष्पत्ति की प्रक्रिया से परिचित हो सकेगा। विद्यार्थी रस के विविध भेदों से परिचित होकर उनमें भेद कर सकेगा तथा रस के विविध रूपों का प्रयोग स्वतंत्र रूप से कर सकेगा।

२.२ रस का अर्थ :

'रस' 'भारतीय काव्यशास्त्र' की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। यद्यपि इसकी परंपरा बहुत पहले से मिलती है किंतु इसपर व्यवस्थित चिंतन आचार्य भरत के द्वारा 'नाट्यशास्त्र' में किया गया। भरतमुनि ने रस निष्पति के सिद्धांत को प्रतिपादित कर रस की वैज्ञानिकता को स्पष्ट किया और एक महत्वपूर्ण काव्य-संप्रदाय के रूप में उसे स्थापित किया।

‘रस’ शब्द रस धातु और 'अ' ‘अच्’ अथवा ‘घञ्’ प्रत्यय से बना है। काव्यशास्त्रीय दृष्टि से इसकी व्याख्या निम्नलिखित रूप से की जा सकती है - ‘रस्यते आस्वाद्यते रसः’ अर्थात वह जो आस्वादित किया जाये रस है। इसे एक और तरह से व्याख्यायित किया जाता है, ‘रस इति रस:’ अर्थात वह जो बहता है रस है। इस प्रकार जिसका आस्वादन लिया जाये और जिसमें द्रवत्व है वह रस है।

नाटक अथवा काव्य में रस का प्रयोग लाक्षणिक अर्थ में किया जाता है। जिसे लोक में आनंद कहा जाता है उसे ही नाटक या काव्य में रस की संज्ञा दी जाती है।

२.३ रस की परिभाषा :

अलग-अलग विद्वानों ने रस को अलग-अलग दृष्टिकोणों से परिभाषित किया है -

आचार्य भरत रस को परिभाषित करते हुए कहते है - "आस्वादयत्वात रस:" अर्थात आस्वादन ही रस है।

आचार्य विश्वनाथ ने रस को परिभाषित करते हुए “रस्यते आस्वाद्यते इति रस:” अर्थात रस आस्वाद रुप है।

आचार्य मम्मट रस को परिभाषित करते हुए कहते हैं, “व्यक्तः स तै विभावद्यैः स्थायी भावो रसः स्मृतः।” अर्थात विभादि के द्वारा अथवा उनके साथ व्यंजना द्वारा व्यक्त किया गया स्थायी भाव रस कहलाता है।

२.४ रस का स्वरूप :

रस के स्वरूप को लेकर अनेक काव्यशास्त्री विद्वानों ने पर्याप्त विचार किया है। भट्टनायक, अभिनव गुप्त, मम्मट, विश्वनाथ जैसे समर्थ व लब्ध प्रतिष्ठित विद्वानों ने बड़ी गंभीरता से रस के स्वरूप पर विचार किया। इन सभी में आचार्य विश्वनाथ के द्वारा रस के स्वरूप पर किया गया विचार ज्यादा संतुलित व समावेशी है -

'सत्त्वोंद्रेकादखण्डस्व प्रकाशानन्दचिन्मयः ।
वेद्यान्तर स्पर्श शून्यो ब्रह्मस्वादसहोदरः ॥
लोको त्तर चमत्कार प्राणः कैश्चित्प्रमातृभिः ।
स्वाकारवद भिन्नत्वेनाय भा स्वार्यते रसः ॥

- साहित्य दर्पण

आचार्य विश्वनाथ के द्वारा रचे गए इस श्लोक के अनुसार रस के स्वरूप में निम्नलिखित तत्वों का समावेश होता है -

१. अखंड
२. स्वप्रकाशानन्द
३. चिन्मय

४. वेद्यांतर

५. स्पर्शशून्य

६. ब्रह्मस्वाद सहोदर

७. लोकोत्तर चमत्कार

इस प्रकार रस के स्वरूप में उपर्युक्त सभी तत्वों का समावेश होता है।

२.५ रस के अवयव या अंग :

आचार्य भरतमुनि ने अपने रससुत्र 'तत्र विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पतिः' में रस के तीन अंगों का उल्लेख किया है -

क) विभाव

ख) अनुभाव

ग) व्यभिचारी भाव अथवा संचारी भाव

आचार्य भरतमुनि उपर्युक्त श्लोक में कहते है - विभाव अनुभाव और व्यभिचारी या संचारी भाव के संयोग से स्थायी भाव रस दशा में परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार स्थायी भाव के रसदशा या रस में परिवर्तित हो जाने के तथ्य को स्वीकार कर लेने पर रस के उपर्युक्त तीन अवयव या अंग माने गए हैं।

(क) विभाव: विभाव का अर्थ है - कारण, जो व्यक्ति अथवा पदार्थ स्थायी भावों के जागृत होने का कारण बनते हैं वे विभाव कहलाते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार "विभाव से अभिप्राय उन वस्तुओं या विषयों के वर्णन से है जिनके प्रति किसी प्रकार का भाव या संवेदना जागृत होती है।" इस प्रकार जो भी व्यक्ति, पदार्थ या स्थितियाँ हमारी संवेदना या हमारे स्थायी भावों को जागृत करती हैं वे विभाव की श्रेणी में आती हैं। विभाव के दो भेद माने गये हैं -

१) आलम्बन

२) उद्दीपन

१. आलंम्बन विभाव : आलंबन विभाव वे होते हैं जिनका आलम्बन (सहारा) लेकर रति, क्रोध हास उत्साह, शोक, विस्मय इत्यादि स्थापित भाव जागृत होते है। प्राय: शृंगार रस के संदर्भ में नायक - नायिका आलम्बन विभाव होते हैं। आलम्बन विभाव के भी दो प्रकार होते हैं -

क - आश्रयालम्बन

ख - विषयालम्बन

क - आश्रयालम्बन : जिस व्यक्ति के मन में भाव जगते है उसे आश्रयालम्बन कहते हैं।

ख - विषयालंबन : जिसके कारण भाव जगें वह विषयालंबन कहलाता है।

जैसे राम को देखकर सीता के मन में रति नामक भाव के जगने पर सीता आश्रयालंबन होंगी और राम विषयालंबन होंगे।

२. **उद्दीपन विभाव :** स्थितियाँ या वस्तुएँ देख अथवा सुनकर जगा हुआ स्थायी भाव और तीव्र होने लगता है उन्हें उद्दीपन विभाव कहा जाता है। प्रत्येक स्थायी भाव के उद्दीपन हेतु अलग - अलग स्थितियाँ या वस्तुएँ जिम्मेदार होती हैं जैसे रति नामक स्थायी भाव को उद्दीप्त बनाने का कार्य कोकिल कुजन, चंद्रोदय, उद्यान, सुरम्य व सुगंधित वातावरण इ. करते हैं।

ख) अनुभाव:- 'अनुभावयन्तीति अनुभावः' अर्थात जिनको होते हुए या घटते हुए महसूस कर सकें अथवा अनुभव कर सकें वे अनुभाव कहलाते हैं। अनुभाव शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है – 'अनु + भावा' अनु का अर्थ है पीछे या बाद में, वे भाव जो स्थायी भाव के जगने के बाद जगते है, आनुभाव कहलाते हैं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि स्थायी भावों के जागृत होने के बाद जो शारीरिक एवं मानसिक विकार या बदलाव देखे जाते हैं वे अनुभाव कहलाते हैं। इनकी संख्या पांच मानी गई है -

१) कात्रिक

२) मानसिक

३) आहार्य

४) वाचिक

५) सात्विक

१) कायिक:- शारीरिक स्थिति में आने वाले बदलाव, शारीरिक चेष्टाएँ, भौहों का तनना, ओठों का फड़फड़ाना, भुजाओं को फड़फड़ाना इत्यादि कायिक अनुभाव के अन्तर्गत हैं।

२) मानसिक :- मन में उठनेवाली भावना के अनुरूप, मन में उठने वाली हर्ष-विषाद, तनाव इत्यादि भाव मानसिक अनुभाव कहलाते हैं।

३) आहार्य:- मन में उठने या जगने वाले भाव के अनुरूप वेशभूषा, अलंकार इत्यादि को धारण करना आहार्य कहलाता है।

४) वाचिक :- मन में जगे हुए भावों के अनुसार वाणी की कठोरता अथवा मृदुता वाचिक अनुभाव के अन्तर्गत आता है।

५) सात्विक:- ऐसे अनुभाव जिनका घटना या होना बहुत चुपचाप तरीके से होता है। कई बार जिनका घटना या होना शीघ्रता से महसूस भी नहीं हो पाता ऐसे अनुभाव सात्विक अनुभाव कहलाते हैं। इनकी संख्या आठ मानी गई है जैसे - स्तंभ, रोमांच, स्वेद, स्वरभंग, वेपयु, अश्रु, वैवर्ण्य, प्रलय तथा जृम्भा - जृम्भा यह नौवाँ प्रकार है इसका उल्लेख भानु कवि ने किया है। यद्यपि अन्य आचार्य केवल उपर्युक्त आठ दशाओं को ही सात्विक अनुभाव के अन्तर्गत स्वीकार करते हैं।

ग) व्यभिचारी अथवा संचारी भाव :- वे भाव जो स्थायी भाव की पुष्टि के लिए ही तत्पर होते हैं तथा उसी के अन्तर्गत उठते-गिरते रहते हैं वे व्यभिचारी भाव कहलाते हैं। जैसे समुद्र की लहरें समुद्र में उठ - गिरकर उसके प्रवाह को और भी पुष्ट करती हैं ठीक उसी तरह संचारी भाव अथवा व्यभिचारी भाव स्थायी भाव में ही उठ - गिरकर उसे और भी पुष्ट करते हैं। ये संचरणशील होते हैं इसलिए इन्हें संचारी भाव कहा जाता है तथा ये किसी एक विशेष के साथ न बंधकर सभी स्थायी भावों मे आते-जाते रहते हैं इसलिए इन्हें व्यभिचारी भाव कहा जाता है।

स्थायी भावों की संख्या ३३ मानी जाती है। अध्ययन की सुविधा के लिए इनके तीन वर्ण किए गए हैं -

१) सुखात्मक

२) दुखात्मक

३) उभयात्मक

१) सुखात्मक :- गर्व, उत्सुकता, हर्ष, आशा, मद, संतोष, मृदुलता, चपलता, धैर्य इत्यादि।

२) दुखात्मक :- शंका, त्रास, विषाद, लज्जा, असूया, चिंता, निराशा इत्यादि।

३) उभयात्मक:- आवेग, चंचलता, दैन्य, जड़ता, स्वप्न, स्मृति इत्यादि।

इस प्रकार विभावों, अनुभावों व संचारी भावों से पुष्ट होकर स्थायी-भाव रसदशा में बदल जाते हैं। और सहृदय या सामाजिक उनका आस्वाद लेने लगता है।

ड) स्थायी भाव :- मनुष्य के मन में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत बने रहने वाले भावों को स्थायी भाव कहा जाता है। उचित विभावों, अनुभावों व व्यभिचारी भावों से पुष्ट होकर यही स्थायी भाव रस दशा में बदल जाते हैं। इनकी कुल संख्या नौ मानी जाती है। ये नौ स्थायी भाव एवं उनपर आधारित रसों का विवरण निम्न तालिका के माध्यम से स्पष्ट किया गया है -

	रस	**स्थायी भाव**
१)	शृंगार	रति
२)	हास्य	हास
३)	रौद्र	क्रोध
४)	करुण	शोक
५)	बीभत्स	जुगुप्सा
६)	भयानक	भय
७)	वीर	उत्साह
८)	अद्भुत	विस्मय
९)	शांत	निर्वेद

उपर्युक्त नौ रसों के अलावा कुछ आचार्य भक्ति एवं वात्सल्य को भी स्वतंत्र रसों की कोटि में रखते हैं किंतु उनका भी स्थायी भाव रति ही हैं।

इस प्रकार दसवें व ग्यारहवें रस के रूप में वात्सल्य व भक्ति की कल्पना की गयी है। बाद के आचार्यों ने उन्हें स्वतंत्र रस के रूप में मान्यता प्रदान की हैं। इस प्रकार उपर्युक्त तालिका में ये दो रस भी निम्नलिखित रूप में जोड़े जा सकते हैं -

१ ०)	वात्सल्य	सन्तान विषयक रति
१ १)	भक्ति	भगवद् विषयक रति

२.६ सारांश

प्रस्तुत इकाई में रस का अर्थ, परिभाषा और स्वरुप का छात्रो ने अध्ययन किया है | रस भारतीय काव्यशास्त्र की एक महत्वपूर्ण अवधारणा रही है | इसीलिए रस की परम्परा और उसका चिंतन भरत कृत 'नाट्यशास्त्र' में हमें देखने को मिलता हैं | इसी के साथ रस के विभिन्न अवयवों का भी छात्रों ने अध्ययन किया हैं |

२.७ बोध प्रश्न

१. रस का अर्थ, परिभाषा और स्वरुप को विस्तार से समझाइए |

२. भरत मुनि के रससुत्र के अनुसार रस के अवयवों को स्पष्ट कीजिए |

२.८ टिप्पणियाँ

१. रस का स्वरूप
२. विभाव
३. अनुभाव

२.९ संदर्भ ग्रंथ

१. काव्यदर्पण - रामदाहिन मिश्र

२. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा - डॉ नगेन्द्र

३. वाङ्मय विमर्श - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

४. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र

५. भारतीय काव्यशास्त्र - डॉ योगेन्द्र प्रताप सिंह

❄❄❄❄❄❄❄

३

रस के भेद

इकाई की रूपरेखा

३.० इकाई का उद्देश्य

३.१ प्रस्तावना

३.२ रस के भेद : सामान्य परिचय

३.३ सारांश

३.४ बोध प्रश्न

३.५ टिप्पणियाँ

३.६ संदर्भ ग्रंथ

३.० इकाई का उद्देश्य :

प्रस्तुत इकाई में निम्नलिखित बिंदुओ को छात्र समझ सकेंगे -

- इस इकाई में रस के भेदों को लेकर पूर्व की इकाई में चर्चा की गई है।
- इस इकाई में उनके भेदों को उदाहरणों के द्वारा स्पष्ट किया गया है।
- इस इकाई के अध्ययन के उपरांत विद्यार्थी प्रत्येक रस के स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव तथा व्यभिचारी भावों से परिचित होंगे और दिए गये उदाहरण के आधार पर उपर्युक्त तत्वों का रस के संदर्भ में विश्लेषण कर सकेंगे।

३.१ प्रस्तावना :

प्रस्तुत इकाई के द्वारा विद्यार्थी रस के विविध भेदों व उसके उदाहरणों को विस्तार से समझ सकेंगे तथा इस के विविध अवयवों को पहचानकर उनका स्वतंत्र रूप से विश्लेषण कर सकेंगे।

३.२ रस के भेद : सामान्य परिचय

३.२.१ श्रृंगार रस :

श्रृंगार को प्रथम रस माना जाता है। सबसे महत्वपूर्ण रस होने के कारण इसे रसराज भी कहा जाता है। इसका स्थायी भाव रति है। सहृदय के मन में विद्यमान रति नामक स्थायी भाव अनुकूल विभावों, अनुभावों व व्यभिचारी अथवा संचारी भावों से संपन्न होकर श्रृंगाररस में परिवर्तित हो जाता है। श्रृंगार रस के दो रूप होते है -

क) संयोग श्रृंगार

ख) वियोग अथवा विप्रलम्ब श्रृंगार

(क) संयोग श्रृंगार : नायक और नायिका के परस्पर मिलन, प्रेमालाप एवं प्रेम की सुखद स्थितियों एवं अनुभूतियों का वर्णन संयोग श्रृंगार के अन्तर्गत होता है। इसे निम्नलिखित उदाहरण द्वारा समझा जा सकता है -

कहत नटत रीझत खझत मिलत खिलत लजियात |
रै भौन में करत हैं, नैनम ही सों बात ||

महाकवि बिहारी के द्वारा रचित उपर्युक्त दोहे में नायिका व नायक के मिलन तथा प्रेमालाप का चित्रण किया गया है। इसलिए यहाँ संयोग श्रृंगार है। उपर्युक्त उदाहरण में पाये जाने वाले विभिन्न भावों का विश्लेषण निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है -

स्थायी भाव - रति

विभाव:- नायक व नायिका का परस्पर एक दूसरे को देखना व आकर्षित होकर मिलन हेतु आकर्षित होना।

आश्रयालंबन : नायक का मन |

विषयालंबन : नायिका का सुंदर रूप व यौवन |

उद्दीपन भाव :- आस-पास का उत्सव जनित उत्साही वातावरण |

अनुभाव : नायिका व नायक द्वारा किये जानेवाले आंखों के इशारे, नायिका का प्रारंभिक नकार के रूप में भावभंगिमा व हाव-भाव का प्रदर्शन, नायक का रीझन, नायिका का खीझना इत्यादि।

व्यभिचारी भाव :- उत्सुकता, उत्साह, लज्जा, चिंता इत्यादि |

(ख) वियोग श्रृंगार : वियोग या विप्रलंब श्रृंगार के अन्तर्गत नायक-नायिका के एक दूसरे से बिछड़ने या वियोग का वर्णन किया जाता है। इस वियोग में भी प्रेम का भाव बना रहता है इसलिए इसे शृंगार के अन्तर्गत रखा जाता है।

यह वियोग प्राय: तीन स्थितियों में होता है, जो निम्नलिखित है -

१) पूर्वराग

२) मान

३) प्रवास

वियोग श्रृंगार की स्थिति को निम्नलिखित उदाहरण द्वारा समझा जा सकता -

उधो, मन न भए दस बीस।
एक हुतो सो गयौ स्याम संग, को अवराधै ईस ।।
इन्द्री सिथिल भई सबहीं माधौ बिनु जथा देह बिनु सीस।

आसा लागि रहति तन स्वासा, जीवहिं कोति बरीस ॥
तुम तो सखा स्याम सुन्दर के, सबल जोग के ईस।
सूर हमारै नंदनंदन बिनु, और नहीं जगदीस ||

महाकवि सूरदास द्वारा रचित उपर्युक्त पद में गोपियों के कृष्ण से वियोग का वर्णन है। कृष्ण की अनुपस्थिति में भी गोपियों का मन कृष्ण में ही लगा हुआ है। उधो उन्हें कृष्ण के प्रेम से विरत कर योग-मार्ग से निर्गुण ब्रहम की प्राप्ति उपदेश देने आते हैं किंतु गोपियाँ उन्हें अपने तर्कों व समर्पण भाव से निरुत्तर कर देती हैं। उपर्युक्त उदाहरण के विभिन्न भावों का विश्लेषण निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है -

स्थायी भाव - रति

विभाव:- उद्धव का आना और गोपियों को निर्गुण ब्रहम की उपासना का उपदेस देना तथा कृष्ण प्रेम को लौकिक मानकर उसे भूल जाने का आग्रह करना।

आश्रयालंबन:- गोपियों का प्रेमानुरक्त मन |

विषयालंबन :- उद्धव की उपस्थिति एवं उपदेश |

उद्दीपन विभाव:- उद्धव के द्वारा निर्गुण ब्रहम की प्रशंसा।

अनुभाव :- गोपियों की मुखमुद्रा, वाणी व हाव भाव में आनेवाले परिवर्तन |

व्यभिचारी भाव:- गोपियों में कृष्ण से न मिल पाने के कारण उत्पन्न होनेवाले दैन्य व निराशा के भाव इत्यादि।

३.२.२ हास्य रस :

किसी व्यक्ति की उटपटांग वेश-भूषा, विचित्र चेष्टाओं व भाषा-प्रयोग के कारण उत्पन्न होनेवाले रस को हास्य रस कहाँ जाता है। इसका स्थायी भाव हास है।

उदाहरण -

तंबूरा ले मंच पर बैठे प्रेम प्रताप।
साथ मिले पन्द्रह मिनट घंटे भर आलाप ॥
घंटा भर आलाप, राग में मारा गाता।
धीरे-धीरे खिसक चुके थे सारे श्रोता ॥

स्थायी भाव :- हास

विभाव :- गायक प्रेमप्रताप का घंटे भर आलाप भरना और श्रोताओं का गायब हो जाना।

आश्रयालंबन :- वे श्रोता जो कविता सुन रहे हैं।

विषयालंबन :- गायक का आवश्यकता से अधिक आलाप आना।

उद्दीपन विभाव:- भरी महफिल से एक-एक कर श्रोताओं का गायब होना।

अनुभाव :- श्रोताओं का हँसना, ठहाके लगाना इत्यादि।

व्यभिचारी भाव:- श्रोताओं में उठनेवाले उत्सुकता, चंचलता इत्यादि के भाव।

पुरुष सुगंध करहि एहि आसा

मनु हिरकाइ लेइ हमपास |

३.२.३ रौद्र रस :

किसी व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त अपशब्द, किए गये अपमान, गुरुजनों या श्रेष्ठ जनों के प्रति किए गए मिथ्या भाषण के कारण उत्पन्न हुए क्रोध के कारण उत्पन्न रस रौद्र रस कहलाता है। इसका स्थायी भाव क्रोध है।

उदाहरण -

सुनत लखन के वचन कठोरा।

परसु सुधारि थरेड कर घोरा।

अब जनि दोष मोहि लोगू।

कटूवादी बालक वध जोगू।।

प्रस्तुत उदाहरण धनुष भंग प्रकरण से जुड़ा हुआ है। शिव धनुष के तोड़े जाने के बाद परशुराम क्रोध से भरे जनक दरबार में पहुँचते हैं और क्रोध से गर्जन-तर्जन करने लगते हैं। ऐसे में परसुराम का लक्ष्मण विरोध करते हैं, कटु शब्द बोलते हैं। इससे परशुराम का क्रोध और बढ़ जाता है। और वे लक्ष्मण के वध के लिए उद्यत हो उठते हैं।

स्थायी भाव :- क्रोध |

विभाव:- शिव धनुष का खंडन |

आश्रयालंबन:- परशुराम के हृदय में क्रोध के भाव का उठना।

विषयालंबन :- टूटा हुआ शिवधनुष व लक्ष्मण के कटुवचन् |

उद्दीपन :- लक्ष्मण का कटु शब्द प्रयोग, गर्जन तर्जन इत्यादि |

अनुभाव:- परशुराम की वाणी का तेज होना, उग्रता के भाव का प्रदर्शन करना इत्यादि।

व्यभिचारी भाव : आवेग, चित्त की चंचलता, उग्रता इत्यादि |

३.२.४ करुण रस :

किसी अत्यंत प्रिय व्यक्ति, वस्तु इत्यादि के नष्ट हो जाने से मन में उत्पन्न होनेवाला दुखद भाव से करूण रस की प्रतीति होती है। इसका स्थायी भाव शोक है।

ऊदाहरण -

अभी तो मुकुट बँधा था माथ,
हुए कल ही हल्दी के हाथ
खुले भी न थे लाज के बोल
खिले थे चुंबन शून्य कपोल
हाय रुक गया यहीं संसार
बना सिंदूर अनल अंगार
वातहत लतिका वह सुकुमार
पड़ी है छिन्नाधार !

उपर्युक्त पंक्तियों में युवा पति की अकारण मृत्यु से शोक में डूबी नायिका की स्थिति का वर्णन किया गया है।

स्थायी भाव : शोक |

आलंबन विभाव: युवा पति की अकाल मृत्यु |

आश्रयालंबन :- पत्नी का मन |

विषयालंबन :- मृत पति की स्मृति |

उद्दीपन विभाव:- मुकुट के बाँधे जाने व हाथों में हल्दी के लगाए जाने की स्मृति।

अनुभाव:- वायु के वेग से धरा पर गिरी लातिका की तरह नायिका का भूमि पर पड़ा होना। वस्त्रों का बिखरा व धूसरित होना इत्यादि।

व्यभिचारी भाव :- निराशा, दैन्य, जड़ता इत्यादि।

३.२.५ बीभत्स रस :

जीवन का एक पक्ष घृणा भी हैं। तमाम घृणित वस्तुओं से हमें घृणा होती है। गंदी, भद्दी, अमांगलिक, दुर्गंधपूर्ण, अश्लील वस्तुओं अथवा दृश्य को देखकर हमें घृणा का बोध होता है। इन वस्तुओं के चित्रण अथवा वर्णन से बीभत्स रस की उत्पत्ति होती है। बीभत्स रस का स्थायी भाव जुगुप्सा या घृणा है।

उदा -

> सिर पर बैठ्यो काग, आँख दोड खात निकात्।
> खींचत जीभहिं स्यार अतिहि आनंद डर धारत।
> गीद्ध जाँबि को खोदि - खोदि के मांस उपारत।
> स्वान आंगुनि काटि - काहि के खात विदारत।

उपर्युक्त उदाहरण श्मशान का है। श्मशान में पड़े शव को विभिन्न प्राणी क्षत-विक्षत कर रहे हैं। उपर्युक्त उदाहरण में स्थायी विभाव, संचारी भाव निम्नवत हैं -

स्थायी भाव :- जुगुप्सा या घृणा |

आलंबन विभाव :- शव, स्मशान का वातावरण इत्यादि |

उद्दीपन विभाव :- कौए, गीध, स्यार व कुते के द्वारा शव को क्षत-विक्षत करना, जांघों से मांस को काटना, उंगलियों को काटना इत्यादि।

अनुभाव :- चेहरे के भावों का बदलना, पलायन की बात सोचना इत्यादि।

संचारी भाव :- मोह, ग्लानि, चिंता इत्यादि।

३.२.६ अद्भुत रस :

विस्मय या आश्चर्य से भर देनेवाले दृश्यों, प्रसंगों के चित्रण अथवा वर्णन से अद्भुत रस की उत्पत्ति होती है।

अद्भुत रस का स्थायी भाव विस्मय या आश्चर्य है।

उदाहरण -

> अखिल भुवन चर-अचर सब
> हरि मुख में लखि मातु |
> चकित भई गद्गद् वचन
> विकसित दृग पुलकातु |

उपर्युक्त उदाहरण में कृष्ण के मुख में अखिल ब्रह्मांड के दर्शन का वर्णन किया गया है। माता यशोदा बालक कृष्ण के मुख में संपूर्ण ब्रह्मांड के दर्शन करके आश्चर्य में पड़ जाती है। उपर्युक्त उदाहरण में स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारियों के निम्नलिखित रूप में मिलते हैं-

स्थायी भाव :- विस्मय या आश्चर्य |

आलंबन विभाव: बालक कृष्ण का मुख |

उद्दीपन विभाव :- बालक कृष्ण के मुख में अखिल ब्रह्मांड का दिखाई पड़ना।

अनुभाव :- यशोदा के मुख के हाव-भावों का बदलना, आश्चर्य से आखों का चौड़ा हो जाना, गद्गद् भाव से बोलना इत्यादि।

संचारी भाव :- भय, दीनता, उत्सुकता इत्यादि |

३.२.७ वीर रस :

वीर रस का स्थायी भाव उत्साह है। वीरतापूर्ण कार्य अथवा किसी जरूरतमंद लाचार को आगे बढ़कर मदत करने के वर्णन अथवा चित्रण करने में वीर रस की निष्पत्ति होती है। वीर रस के चार भेद शास्त्र में स्वीकृत हैं -

i. युद्धवीर

ii. दानवीर

iii. दयावीर

iv. धर्मवीर

उपर्युक्त में से युद्धवीर का उदाहरण निम्नवत है -

सौमित्र से घननाद का रव अल्प भी न सहा गया।
निज शत्रु को देखे बिना, उनसे तनिक न रहा गया।
रघुवीर से आदेश ले युद्धार्थ वे सजने लगे।
रणवाद्य भी निर्घोष कर धूम से बजने लगे।

उपर्युक्त उदाहरण में स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव निम्नवत हैं -

स्थायी भाव :- उत्साह |

आलंबन विभाव:- घननाद के द्वारा किया जाने वाला रव |

उद्दीपन विभाव: युद्ध के निमित्त बजने वाले रणवाद्य |

अनुभाव : लक्ष्मण के मनोभावों का बदलना, युद्ध के लिए व्यग्त होना, रामजी से युद्ध की आज्ञा लेना इत्यादि।

संचारी :- आवेग, व्यग्तता इत्यादि ।

३.२.८ भयानक रस :

भयानक रस का स्थायी भाव भय है। हिंसक प्राणियों व उक्त स्वभाव व कार्यवाले व्यक्तियों के कार्यों के वर्णन अथवा चित्रण से भयानक रस की उत्पत्ति होती है। इसके स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव निम्नवत हैं -

उदाहरण -

हाहाकार हुआ व्रन्दनमय कठिन वज्र होते थे चूर,
हुए दिगन्त बधिर भीषणख बार-बार होता था क्रूर
दिग्दाहों से घूम उठे या जलधर उठे क्षितिज तट के
सघन गगन में भीम प्रकंपन झंझा के चलते झटके।
धँसती घरा धधकती ज्वाला ज्वालमुखियों के निश्वास
और संकुचित क्रमश: उसके अवयव का होता था ह्रास।

उपर्युक्त उदाहरण में प्रलय की भीषण स्थितियों का वर्णन किया गया है।

रथामी भाव :- भय |

आलंबन विभाव :- प्रलय का वर्णन |

उद्दीपन विभाव:- भयंकर गर्जन, झंझावात का चलना, ज्वालामुखियों से आग का निकलना, समुद्र का भयंकर हिलोरे लेना इत्यादि |

अनुभाव :- हाहाकर करना, क्रंदन करना, बधिर हो जाना इत्यादि |

संचारी भाव :- त्रास, विकलता, मूर्च्छा इत्यादि |

३.२.९ शांत रस :

शांत रस का स्थायी भाव निर्वेद है। संसार की असारता, क्षणभंगुरता, तीर्थदर्शन, संत वचन या प्रवचन, श्मशान यात्रा इत्यादि के वर्णन अथवा चित्रण से शांत रस की उत्पत्ति होती है। इसके स्थायी भाव, विभाव, आलंबन भाव तथा संचारी भाव निम्नवत हैं -

उदाहरण -

हाथी न साथी न घोरे न चेरे
न गाँव न ठाँव, को नाव बिलै है।
लात ने मात न मित्र न पुत्र
न मित्र न अंग के संग रहे हैं।
'केशव' काम को राम बिसारत
और निकाम ते काम न ऐहै।
चेत रे चेत अजौं चित अन्तर
अन्तक लोक अकेलोइ जैहै ॥

स्थायी भाव :- निर्वेद

आलंबन विभाव-:- संसार की अनित्यता व असारता

उद्दीपन विभाव:-- हांथी, घोड़े, मित्र, वित्त, नौकर-चाकर जैसे संसारी वैभव का छूट जाना |

अनुभाव :- यह कथन करना या कहना।

संचारी भाव :- शंका, तर्क, अनित्यता का बोध इत्यादि |

३.२.१०. वात्सल्य रस :

संस्कृत काव्यशास्त्र के अधिकांश आचार्योंने वात्सल्य रस को स्वतंत्र रस के रूप में स्वीकार नहीं किया है। वे इसे श्रृंगार के अन्तर्गत ही परिगणित कर लेते हैं। किंतु परवर्ती आचार्यों में भोज, भानुदत्त, विश्वनाथ और हरिश्चन्द्र इसे स्वतंत्र रस के रूप में स्वीकार करते हैं। इसका स्थायी भाव पुत्र स्नेह है। पुत्र के प्रति स्नेह व उसकी चेष्टाओं के वर्णन अथवा चित्रण से वात्सल्य रस की उत्पत्ति होती है। वात्सल्य रस का स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव निम्नवत है -

उदाहरण -

जसोदा हरि पालने झुलावै
हलरावै, दुलराइ मल्हावै जोइ सोई कह गाँवै ॥
मेरे लाल की आउ निदरिया काहे न आनि सुवावै ।
तू काहे न बेगि सों आवै, तोकों कान्ह बुलावै ॥
कबहुँ पलक हरि मूँदि लेत हैं कबहुँ अधर फरकावै ।
सोवत जानि मौन है रहि रहि करि करि सैन बतावै ।
इहि अन्तर अकुलाय उठे हरि जसुमति मधुरे गावै ।
जो सुखं 'सूर' अमर मुनि दुर्लभ सो नँद भामिनि यावै ।

स्थायी भाव :- पुत्र स्नेह |

आलंबन विभाव :- बालक कृष्ण का सुंदर बाल रूप |

उद्दीपन विभाव: बालक कृष्ण का पलकों को झपकाना, अधरों को फड़काना, अकुला उठना इत्यादि |

अनुभाव :- यशोदा का शिशु को हलराना, मल्हाना गाना इत्यादि ।

संचारी भाव:- हर्ष, शंका इत्यादि ।

३.२.११. भक्ति रस :

भक्ति रस को स्वतंत्र रस के रूप में पुरस्कृत व स्थापित कराने का श्रेय आचार्य मधुसूदन सरस्वती और आचार्य रूपगोस्वामी को जाता है। इसका स्थायी भाव भगवत्प्रेम है। ईश्वर या उसके किसी रूप का वर्णन या चित्रण, ईश्वर का गुणानुवाद, धार्मिक ग्रंथों के श्रवण व पारायण से भक्ति रस की उत्पत्ति होती है। इसके स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव व संचारी भाव निम्नवत हैं -

उदाहरण -

तू दयालु दीन हौ तू दानि हौं भिखारी ।
हौं प्रसिद्ध पातकी तू पाप पुंज हारी ॥
नाथ तू अनाथ को अनाथ कौन मोसो
मों समान आरत नहिं आरति हर तोषो
ब्रहम तू हौं जीव हौं, तू ठाकुर हौं चेरो ।
नात मात गुरु सखा तू सब बिधि हित मेरो ।
मोंहि तोंहि नाते अनेक मानिये जो भावै ।
त्यों त्यों तुलसी कृपालु चरन सरन पावै ॥

स्थायी भाव :- भगवत्प्रेम |

आलंबन विभाव :- ईश्वर (राम) आलम्बन विभाव हैं।

उद्दीपन विभाव :- राम की दानशीलता, करुणा, भक्त प्रेम इत्यादि उद्दीपन विभाव हैं।

अनुभाव :- गुणकथन, विनय प्रदर्शन इत्यादि।

संचारी भाव :- हर्ष, गर्व, इत्यादि।

३.३ सारांश :

सारांशतः इस इकाई में छात्रों ने रस के भेदों का अध्ययन किया हैं | यहाँ पर विविध रस के पदों को उदाहरण के द्वारा समझाया हैं | साथ हि स्थायी भाव, विभाव, आश्रयालंबन, विषयालंबन, उद्दीपन, अनुभाव, व्यभिचारी भाव आदि को उदाहरण के द्वारा स्पष्ट किया हैं |

३.४ बोध प्रश्न

१. रस के विविध भेदों की विस्तार से चर्चा कीजिए |

२. रस में स्थायी भाव का क्या स्थान हैं, उसे विस्तार से स्पष्ट कीजिए |

३.५ टिप्पणियाँ :

१. संयोग शृंगार

२. वियोग शृंगार

३. हास्य रस

४. बीभत्स रस

३.६ संदर्भ ग्रंथ :

१. काव्यदर्पण - रामदाहिन मिश्र

२. भारतीय काव्यशास्त्र की परंपरा - डॉ नगेन्द्र

३. वाङ्मय विमर्श - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

४. काव्यशास्त्र - डॉ. भगीरथ मिश्र

५. भारतीय काव्यशास्त्र - डॉ योगेन्द्र प्रताप सिंह

❄❄❄❄❄❄❄

४

गद्य विधा: गद्य के विविध रूप

इकाई की रूपरेखा

४.० इकाई का उद्देश्य

४.१ प्रस्तावना

४.२ उपन्यास की परिभाषा

४.३ उपन्यास का स्वरूप व प्रमुख तत्व

४.४ कहानी की परिभाषा

४.५ कहानी का स्वरूप व प्रमुख तत्व

४.६ रेखाचित्र का तात्विक विवेचन

४.७ संस्मरण का तात्विक विवेचन

४.८ जीवनी का तात्विक विवेचन

४.९ आत्मकथा का तात्विक विवेचन

४.१० सारांश

४.११ लघुत्तरीय प्रश्न

४.१२ वैकल्पिक प्रश्न

४.१३ बोध प्रश्न

४.१४ संदर्भ ग्रंथ

४.० इकाई का उद्देश्य :

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन से विद्यार्थी निम्नलिखित मुद्दों से परिचित हो सकेंगे।

- उपन्यास की परिभाषा, उपन्यास के स्वरूप और तथ्यों की जानकारी मिलेगी।
- कहानी की परिभाषा, स्वरूप और कहानी के तत्वों से परिचित होंगे।
- रेखाचित्र तथा संस्मरण के तात्विक विवेचन स्पष्ट होंगे।
- जीवनी और आत्मकथा के तात्विक विवेचन से परिचय होगा।

४.१ प्रस्तावना :

अध्ययन की दृष्टि से हिंदी साहित्य को मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित किया गया है एक गद्य और दूसरा पद्य। पद्य के अंतर्गत भावनाएँ प्रधान होती हैं जबकि गद्य का संबंध हमारे विचारों से संबंधित होता है। गद्य, लय, ताल, छंद मुक्त होती है और इसमें विचारों का प्रवाह होता है गद्य दो शब्दों गद्+यत से मिलकर बना है। जिसका अर्थ होता है कहना या बोलना।

हिंदी भाषा में गद्य की उत्पत्ति से ही साहित्य का विकास हुआ है। गद्य को विभिन्न विधाओं के अंतर्गत देखा जा सकता है। जैसे - उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध, जीवनी, रेखाचित्र, संस्मरण आदि। इस इकाई के अंतर्गत हम गद्य के इन्हीं विधाओं में से मुख्य रूप से उपन्यास, कहानी, रेखाचित्र, संस्मरण, जीवनी तथा आत्मकथा का विशेष अध्ययन करेंगे।

४.२ उपन्यास की परिभाषा :

उपन्यास 'उप' और 'न्यास' से मिलकर बना है। 'उप' का अर्थ है समीप और 'न्यास' का अर्थ है रचना। अर्थात उपन्यास वह है जिसमें मानव जीवन के किसी तत्व को उक्तिउक्त के रूप में समन्वित कर समीप रखा जाए। इसमें उपन्यासकार मानव जीवन से संबंधित सुखद एवं दु:खद परंतु मर्मस्पर्शी घटनाओं को निश्चित तारतम्य के साथ चित्रित करता है।

इस प्रसंग में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी ने अपनी पुस्तक 'आधुनिक साहित्य' में लिखा है कि "उपन्यास में आजकल गद्यात्मक कृति का अर्थ लिया जाता है। पद्यबद्ध उपन्यास नहीं हुआ करते। उपन्यास के विकास में गद्य के विकास का भी संबंध है। प्रायः वही परिस्थिति गद्य के विकास में सहायक हुई है जो उपन्यास के विकास में योग दे रही थी। यूरोप में गद्य उपन्यासों के पहले कुछ प्रेमाख्यान कविताएँ प्रचलित थीं। उन्हें भी आधुनिक उपन्यास की जननी कहा जा सकता है।"

डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार "उपन्यास आधुनिक युग की देन है। नए गद्य के प्रचार के साथ-साथ उपन्यास का प्रचार हुआ है। आधुनिक उपन्यास केवल कथा मात्र नहीं है और पुरानी कथाओं और आख्यायिकाओं की भाँति कथा सूत्र का बहाना लेकर उपमाओं, रूपकों, दीपकों और श्लेषों की छटा और सरस पदों में गुम्फित पदावली की छटा दिखाने का कौशल भी नहीं है। यह आधुनिक वैयक्तिकतावादी दृष्टिकोण का परिणाम है।"

डॉ. श्यामसुंदर दास उपन्यास को मानव के वास्तविक जीवन की काल्पनिक कथा मानते हैं।

मुंशी प्रेमचंद भी कहते हैं - "मैं उपन्यास को मानव-जीवन का चित्र समझता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मुख्य स्वर है।"

डॉ. जे.बी. क्रिस्टले लिखते हैं, "उपन्यास जीवन का विशाल दर्पण है और इसका विस्तार साहित्य के किसी भी रूप से बड़ा है।"

विलियम हेनरी हेडसन के अनुसार "मानव और मानवीय भावों से तथा क्रियाओं की विस्तृत चित्रावली ही नर एवं नारियों की सार्वकालिक, सार्वदेशिक रुचि ही उपन्यास के अस्तित्व का कारण है।

उपर्युक्त परिभाषाओं पर विचार करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपन्यास की एक सर्वसामान्य परिभाषा निर्धारित करना कठिन है। यद्यपि उपर्युक्त परिभाषाओं में एकरूपता नहीं है तथापि प्रायः सभी विद्वान उपन्यास को मानव-जीवन का काल्पनिक या कलात्मक चित्र मानते हैं। अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि उपन्यास मानव जीवन की कथा है।

४.३ उपन्यास के तत्व :

उपन्यास सृजनात्मक साहित्य की सर्वाधिक गतिशील विधा है। आरंभ से आज तक इसके ढेर सारे रूप हमारे सामने आए हैं। जीवन के सतत विकासमान और परिवर्तन, शरीर को उसके वृहदमय आकार में प्रस्तुत करने की जो क्षमता उपन्यास में है वह साहित्य कि किसी अन्य विधा में नहीं है। कहानी में उसके विभिन्न कोनों, मोड़ो, तेवर के संक्षिप्त संकेतों की संभावना रहती है। संक्षिप्तता के अभाव में कहानी कला नष्ट होने लगती है। उसके बहुआयामी तथा उलझन पूर्ण होने का सतत डर लगा रहता है।

उपन्यास के तत्वों के बारे में विभिन्न मत है। लेकिन भारतीय तथा पाश्चात्य आचार्यों द्वारा निम्न तत्व सर्वमान्य है।

i. **कथावस्तु :** कथावस्तु उपन्यास का मूल आधार है। यह उपन्यास की भित्ति है। जिसमें कथाकार अपने मन के मुताबिक चित्र अंकित कर सकता है। रचना की वैशिष्टता उसकी सामग्री पर आधारित करती है। संगमरवर की मूर्ति और सामान्य पत्थर की मूर्ति में निश्चय ही फर्क होता है। कथानक का चयन कहीं से भी हो सकता है। जीवन से भी, ऐतिहासिक और पौराणिक प्रदेश से भी। लेकिन सभी विषयों में काल्पनिकता प्रक्षय अधिक होता है। क्रम और श्रृंखलाबद्धता उपन्यास का प्राण है। उपन्यास पाठक को कौतूहल ही नहीं जगाता बल्कि उस घटना की संभावना और रोचकता पर भी नजर गड़ाता है।

   एक अच्छे उपन्यास के कथानक में चार गुणों का होना जरूरी माना जाता है मौलिकता, संभावना, सुसंगठन और रोचकता।

ii. **पात्र एवं चरित्र चित्रण :** इंसान यदि उपन्यास का विषय है तो उसका सर्वाधिक महत्वपूर्ण चित्रण है चरित्र-चित्रण। क्योंकि उसका अस्तित्व उसके चरित्र में निहित होता है। चरित्र ही एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से अलग करता है। जिसके द्वारा हम उसके संपूर्ण व्यक्तित्व को प्रकाश में लाते हैं। इसमें ना उसके बाहरी बल्कि भीतरी भाव का दर्शन होता है। केवल बाहरी अस्तित्व का परिचय तो उसके पहनावे, बोलचाल और आचरण से मिल जाता है। किंतु उसके अंतर्गत भाव की परख, उसकी करुणा, उदारता, मानसिक संघर्ष, राग-विराग और संवेदनशीलता आदि से होता है। पात्र अपने संपूर्ण व्यक्तित्व के साथ कुछ अच्छाइयों को लेकर चरित्र - चित्रण करते समय उपन्यासकार इस ढंग से प्रस्तुत करता है कि उसमें सजीवता आ जाए। एक बार जिस रूप में पात्र का चयन हो जाता है फिर वह परिस्थिति के अनुसार वैसा ही आचरण करता है। वस्तुतः दो प्रकार के चरित्र होते हैं –

   १) वर्ग गत
   २) व्यक्तित्व प्रधान।

   वर्गगत चरित्र-चित्रण में पात्रों की उच्च-निम्न जाति द्वारा चरित्र पर प्रकाश डाला जाता है। इसमें एक व्यक्ति का चरित्र ना होकर पूरे वर्ग को लिया जाता है। दूसरे प्रकार के पात्रों में अपनी कुछ खासियत होती है। वे सामान्य लोगों से सर्वथा भिन्न होते हैं। जैसे जैनेंद्र के पात्र, अज्ञेय के पात्र।

iii. **कथोपकथन :** कथा को आगे सरकाने और पात्रों के व्यक्तित्व का उद्घाटन करने के लिए उपन्यासकार को वार्तालाप का सहारा लेना पड़ता है। इसके चुनाव में भी दक्षता की जरूरत होती है। यदि वार्तालाप कथानक के अनुरूप प्रस्तुत नहीं किया गया तो वह प्रभावपूर्ण नहीं हो सकता और पात्रों के बौद्धिक विकास के अनुरूप कथोपकथन का निर्माण संभव है। भाषा पात्रों के अनुरूप नहीं हुई तो व्यक्तित्व का विकास सहज नहीं हो पाएगा। प्रसाद जी के पात्र चाहे किसी भी वर्ग के हों वे उच्च कोटि की भाषा बोलते हैं। जबकि प्रेमचंद्र के पात्र रोज़मर्रा की जिंदगी में व्यवहारित होने वाली भाषा या शब्दों का प्रयोग करते हैं। इसलिए भाषा पात्रों के अनुरूप हो, साथ ही उसका विषय भी उनके मानसिक धरातल के मुताबिक हो। कथोपकथन पात्रों के अनुरूप होने के साथ ही स्वाभाविक, सार्थक, सजीव, संक्षिप्त हो। लंबे-लंबे उद्धरण या भाषण उपन्यास की रोचकता में खलल पैदा करते हैं।

iv. **देशकाल और वातावरण** : इसके अंतर्गत आचार-विचार, रीति-रिवाज, रहन-सहन और राजनीतिक अथवा सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन आता है। उपन्यास की सजीवता एवं स्वाभाविकता लाने के लिए देशकाल या वातावरण का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। प्रत्येक पात्र और उसका क्रियाकलाप किसी विशेष देश काल या वातावरण में होता है। वह उन सबमें बंधा होता है इसलिए उपन्यास की पूर्णता के लिए उन सबका वर्णन जरूरी होता है। ऐतिहासिक उपन्यास में इसका खास महत्व होता है। क्योंकि वर्तमान और अतीत के ऐतिहासिक काल की स्थितियों में फर्क आ जाता है, इसलिए भूतकाल को वर्तमान में घटित होते हुए नहीं दर्शाया जा सकता। उसमें तत् युगीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक स्थितियों का आकलन तो रहता ही है, आचार-विचार और जीवन-दर्शन का चित्रण भी रहता है। तत्कालीन दृश्यों और वातावरण का सम्यक निर्देशन उपन्यास के सौंदर्य में अभिवृद्धि करता है। पर इतना जरूर है कि विस्तार दोष नहीं आना चाहिए अन्यथा उपन्यास अरुचिकर हो जाएगा।

v. **भाषा-शैली:** उपन्यास की भाषा शैली माधुर्य गुण से युक्त होनी चाहिए। परिस्थिति और विषय के अनुरूप यदि भाषा नहीं हुई तो उपन्यास अपना प्रभाव नहीं छोड़ सकता। इसलिए उपन्यास में भाषा की सजीवता का होना तथा सहजता का होना जरूरी होता है। लंबे भाषण या क्लिष्ट भाषा और अलंकारों का अनुचित प्रयोग आदि उपन्यास की रसमयता पर बाधा उत्पन्न करते हैं। वैसे तो उपन्यासकार अपने मतानुसार शैली का विकास स्वतंत्र रूप से करता है, इसलिए इसे किसी विशिष्ट सीमा में बांधना नामुमकिन है।

vi. **उद्देश्य:** उपन्यास का मुख्य उद्देश्य मनोरंजन करना है किंतु आज मनोरंजन के अतिरिक्त किसी विशिष्ट उद्देश्य को प्रतिपादन करने के लिए उपन्यास लिखे जाते हैं। उच्च स्तरीय उपन्यास वही कहा जाएगा जो हमारी जिंदगी को रूपायित करे। उद्देश्य की अभिव्यक्ति बड़ी सहजता से होनी चाहिए, साथ ही उसका पाठक पर प्रभाव पड़े। आज उपन्यासकार अपना उद्देश्य मनोवैज्ञानिक ढंग से विश्लेषित करते हैं। उसके जरिए मानव मन के गहनतम रहस्यों का प्रतिपादन किया जाता है। इसलिए उपन्यास आज मानव-जीवन का दर्पण बन जाता है।

उद्देश्य पूरा उपदेश या भाषण नहीं होता। समूचे उपन्यास में सूक्तियों या वाक्यों में विस्तृत रहता है। अपने विचारों और सिद्धांतों के प्रतिपादन के लिए उपन्यासकार पात्रों

की सर्जना करता है और उनके परस्पर विरोधी विचारों में अंतर संघर्ष प्रदर्शित करके अपने दृष्टिकोण को प्रदर्शित करता है। पर एक बात का ध्यान रखना जरूरी है उपन्यासकार का प्रमुख उद्देश्य कहानी कहना होना चाहिए, सिद्धांतों का प्रतिपादन करना नहीं। उपन्यासकार के आदर्श और विचार कथावस्तु में ही अभिव्यक्त हो जाते हैं। लेखक यदि प्रत्यक्ष रुप से सिद्धांत प्रतिपादित करना चाहेगा तो वह प्रचारक बन जाएगा।

४.४ कहानी की परिभाषा :

कहानी हिंदी गद्य लेखन की एक विधा है। १९वीं सदी में गद्य में एक नई विधा का विकास हुआ जिसे कहानी के नाम से जाना जाता है। बांग्ला में उसे 'गल्प' कहा जाता है। मनुष्य के जन्म के साथ ही कहानी का जन्म हुआ और कहानी कहना और सुनना मानव का आदिम स्वभाव बन गया। इसी कारण सभी सभ्य और असभ्य समाज में कहानियाँ पाई जाती हैं। हमारे देश में कहानियों की बड़ी लंबी और संपन्न परंपरा रही है।

निम्नलिखित विद्वान ने कहानी को परिभाषित किया है -

डॉ. आचार्य रामचंद्र तिवारी का कहना है कि "हिंदी कहानियों के उद्भव और विकास में भारत के प्राचीन कथा साहित्य, पाश्चात्य कथा साहित्य एवं लोक कथा साहित्य का सम्मिलित प्रभाव देखा जा सकता है।"

४.५ कहानी का स्वरुप व प्रमुख तत्व :

कहानी का स्वरूप :

कहानी में मानव जीवन के किसी एक पक्ष का मनोहारी चित्रण किया जाता है। किसी एक प्रभाव को उत्पन्न करना ही कहानी का उद्देश्य रहता है। कहानी गद्य साहित्य की सबसे लोकप्रिय मनोरंजक विधा है। कहानी साहित्य की वह गद्य रचना है, जिसमें जीवन के किसी एक पक्ष का कल्पना प्रधान, हृदयस्पर्शी एवं सुरुचिपूर्ण कथात्मक वर्णन होता है। कहानी मानव-जीवन का वह अखंड चित्र है, जिसकी कोई सीमा रेखा नहीं है। और जिसमें किसी एक पक्ष की अनिवार्यता नहीं है। उपन्यास में मानव जीवन का संपूर्ण बृहत् रूप दिखाने का प्रयास किया जाता है, जबकि कहानी में उपन्यास की तरह सभी रसों का समावेश नहीं होता है।

अमेरिका के सुप्रसिद्ध विद्वान एडलर कहानी की व्याख्या करते हुए लिखते हैं, "छोटी कहानी एक ऐसा आख्याना है जो इतना छोटा है कि, एक बैठक में पढ़ा जा सके और पाठक पर एक ही प्रभाव उत्पन्न करने के लिहाज से लिखा गया हो। उसमें ऐसी बातों को त्याग दिया जाता है जो उसकी प्रभाव उत्पादकता में बाधक हो। वह स्वतः पूर्ण होती है।" हिंदी के सुप्रसिद्ध कथाकार प्रेमचंद ने कहानी की रूपरेखा इस प्रकार आधारित की है कि "गल्प ऐसी रचना है कि जिसमें जीवन के किसी एक अंश, उसका चरित्र, उसकी शैली उसका कथा विन्यास सब उसी एक भाव को पुष्ट करते हैं। उपन्यास की भाँति उसमें मानव-जीवन का संपूर्ण एवं विस्तृत चित्रण प्रस्तुत करने का प्रयत्न नहीं किया जाता। उसमें सभी रसों का समायोजन किया जाता है। वह ऐसा रमणीय उद्यान नहीं है जिसमें रंग-रंग के फूल या बेल-बूटे सजे हों, बल्कि कहानी

एक मामला है जिसमें एक ही पौधे का माधुर्य विद्यमान रहता है।" डॉ. श्याम सुंदर दास ने कहानी में नाटकीय तत्वों को प्रमुखता प्रदान करते हुए कहा है कि, "आख्यायी को एक निश्चित लक्ष्य या प्रभाव को लेकर लिखा गया नाटकीय आख्यान है।" उपन्यास यदि जीवन का संपूर्ण चित्रण है तो कहानी उस पक्ष की झाँकी मात्र है। इसलिए उसे जीवन का एक 'स्नेक' सांप कहा जाता है। कहानी के तत्व शरीर के अंगों की तरह पूरक होते हैं |

कहानी के तत्व :

कहानी के तत्वों को निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत देखा जा सकता है -

i. **कथावस्तु :** कहानी की कथाएं अत्यंत संक्षिप्त होती हैं। उसकी उपयोगिता शरीर की हड्डी की तरह है। घटना घटित होने से पहले उसके कारण का विवेचन किया जाना चाहिए। इसमें घटनाएँ प्रमुख होती हैं जिसका परस्पर संबंध होना जरूरी है। उनका तारतम्य एक निश्चित तौर पर होना चाहिए, ताकि कौतूहल का भाव सतत बना रहे। कहानी के आरंभ में ही अंत का संकेत किया जाना चाहिए ताकि अंत अचानक हो एवं अप्रत्यक्ष ना लगे। जीवन का प्रवाह चूँकि संघर्षमय है अतः कहानी में भी दो-एक घुमाव होना जरूरी है ताकि उसकी रोचकता में अभिवृद्धि हो। कथावस्तु के मुख्य अवयव इस प्रकार हैं -

   - **प्रस्तावना:** पात्रों का वैयक्तिक परिचय देने के साथ ही घटनाओं का उनसे संबंध स्पष्ट कर दिया जाता है। वातावरण व सामाजिक स्थिति आदि का चित्रण भी इसी में कर दिया जाता है। अक्सर वार्तालाप के द्वारा इसका संकेत कर दिया जाता है।
   - **मुख्यअंश:** कथा का संघर्ष आरंभ होने के साथ चरम सीमा की ओर बढ़ता है। इस बात का उसमें ध्यान रखना चाहिए। कि संघर्ष की स्थिति स्वाभाविक रूप से उपस्थित होकर वह पात्रों के अनुरूप हो।
   - **चरम सीमा:** इसमें संघर्ष और पाठक की उत्सुकता चरम सीमा तक पहुँच जाती है। कहानी का संपूर्ण घटनाचक्र वातावरण और चरित्र-चित्रण आदि चरम सीमा की तैयारी में योगदान देते हैं।
   - **अंत:** इसमें कहानी का परिणाम निहित होता है। इसमें संपूर्ण रहस्य का उद्घाटन हो जाता है। इस प्रकार कथानक में अनावश्यक घटनाओं, तथ्यों और स्वाभाविक रहस्यों को स्थान नहीं मिलना चाहिए। इसका जीवन के किसी एक सत्यपरक घटना से उद्घाटन किया जाना चाहिए। मौलिकता के साथ-साथ कथानक में सुसंबंध योजना भी आवश्यक है।

ii. **चरित्र चित्रण** : आज कहानियों में चरित्र-चित्रण का महत्व अपेक्षित रूप में बढ़ गया है। इसका संबंध पात्रों से होता है। कहानी में इसकी संख्या कम होती है। इसमें पात्रों के चरित्र का संपूर्ण विकास क्रम न दिखाकर उन अंशों पर प्रकाश डाला जाता है, जिनसे उनके व्यक्तित्व में निखार आ जाए। पात्रों की सजीवता ही कहानी का प्राण है, भले ही वे काल्पनिक क्यों ना हो। यह तो माना ही जाएगा कि कहानी के पात्र कल्पना के द्वारा कल्पित होते हैं, लेकिन उनका अपना एक निजी अस्तित्व होता है। कहानीकार पात्रों के चरित्रों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत करते हुए एक तथ्य का निरूपण करता है।

इसलिए पात्र लेखक की कठपुतली बनकर उसके इशारे पर नाचने के लिए मजबूर नहीं होते। विलियम थैकरे ने एक जगह पर लिखा है कि, "मेरे पात्र मेरे वश में नहीं रहते बल्कि मेरी लेखनी इन पात्रों के वश में रहती है।"
वस्तुतः पात्रों के चरित्र का सजीव एवं संभावित विश्लेषण करने के लिए लेखक को अपना व्यक्तित्व उसमें लादना या थोपना नहीं चाहिए। उसके चरित्र का सहज प्रस्फुटन कहानी की प्राणवत्ता को बल देता है। चरित्र चित्रण के ४ तरीके हैं -

१) वर्णन द्वारा

२) संकेत द्वारा

३) वार्तालाप द्वारा

४) घटनाओं द्वारा

iii. **कथोपकथन :** इसके माध्यम से पात्रों की मानसिक अवस्था का परिचय मिलता है। वार्तालाप यदि चरित्र के अनुरूप नहीं होगा तो पात्र के चरित्र का मूल्यांकन उचित ढंग से नहीं हो सकेगा। किसी और कि जबान से जानने के बजाय यदि पात्रों के मुख से सुनकर जाना जाए तो उसका प्रभाव कुछ और ही होगा। इसलिए वार्तालाप को संगठित और चमत्कार पूर्ण होना चाहिए।

iv. **वातावरण :** वातावरण भौतिक एवं मानसिक दोनों ही प्रकार का हो सकता है। कथानक की विश्वसनीयता बनाने के लिए वातावरण के निर्माण में भी अपनी एक अलग भूमिका होती है। यदि कहानी के पात्र काल के अनुरूप नहीं होते तो यह हमारे जीवन के सहायक नहीं हो पाते। घटनाक्रम के विकास के लिए पात्रों के व्यक्तित्व को उजागर करने के लिहाज से वातावरण की सृष्टि आवश्यक है। प्रसाद जी इस कला में माहिर हैं। उदाहरण के लिए हम उनकी 'पुरस्कार' कहानी ले सकते हैं। कमलेश्वर की 'दिल्ली में एक मौत' में शहरी वातावरण तथा शहरी लोगों की मानसिकता का पता चल जाता है।

v. **उद्देश्य:** उद्देश्य सिर्फ कहानी के मनोरंजन का साधन मात्र नहीं है। कुछ तत्वों का निरूपण अथवा मानव मन का परिचय पाने का आग्रह इसका मूल स्वर होता है। कहानी में उद्देश्य प्राय: व्यंजित होता है। इसका उद्देश्य जीवन की समीक्षा करना नहीं होता बल्कि जीवन के प्रति एक दृष्टिकोण का परिचय कराना होता है।

vi. **शैली :** शैली का संबंध कहानी के किसी एक तत्व से नहीं, बल्कि सभी तत्वों से है और उसकी अच्छाई और बुराई का प्रभाव समूचे कहानी पर पड़ता है। कला की प्रेसणियता शैली पर ही आधारित होती है। इसका संबंध सिर्फ शब्दों से नहीं, विचार तथा भाव से होता है। अच्छी शैली के लिए लक्षणा, व्यंजना आदि भाषा की शक्तियों का उपयोग करना पड़ता है। मुख्यतः दो प्रकार की शैलियों का प्रयोग होता है -

१. मुहावरेदार शैली जिसके प्रतिनिधि मुंशी प्रेमचंद जी हैं।

२. अलंकृत संस्कृत निष्ठ शैली जिसके प्रतिनिधि हैं जयशंकर प्रसाद जी।

इस प्रकार कहानी में शब्द चयन, सुसंगठित वाक्य विन्यास, अलंकार योजना और शब्द शक्तियों का सफल प्रयोग आदि शैली के प्रधान गुण हैं, जो कहानी को सफल बनाते हैं।

४.६ रेखाचित्र के प्रमुख तत्व :

अधिकांश रेखाचित्रों का प्रधान वर्ण्य विषय कोई न कोई व्यक्ति ही होता है। रेखाओं से बनाए गए चित्र के लिए रेखाचित्र शब्द का प्रयोग किया जाता है। मलयालम भाषा में रेखा चित्र को 'तूलिका चित्र' कहा जाता है। रेखाचित्र के लिए हिंदी में व्यक्ति चित्र, चरित लेख, शब्द चित्र आदि अन्य शब्दों का प्रयोग होता है। लेकिन रेखाचित्र शब्द ही अधिक उपर्युक्त सार्थक और प्रचलित है।

रेखाचित्र की सीमाएं निश्चित है। उसे कम से कम शब्दों में सजीव रूप देना करना पड़ता है। छोटे-छोटे वाक्यों की सहायता से अधिक से अधिक तीव्र और मार्मिक भावनाओं को व्यक्त किया जाता है। इस कुशल कार्य के लिए रेखाचित्र में जिन गुणों का होना जरूरी है उनमें संवेदनशील हृदय, सूक्ष्म दृष्टि, मर्मवेधी कलम प्रमुख है। रेखाचित्रकार भावमय रूप सृष्टि करते समय अपना निजीपन उड़ेल देता है।

रेखाचित्र में किसी एक व्यक्ति, स्थान, घटना या दृश्य आदि का वर्णन होता है। बाह्य विशेषताओं के वर्णन में ही आंतरिक गुणों को भी समन्वित कर लेता है। रेखाचित्र सरल, लघु तथा वर्णन प्रधान होता है। व्यक्ति के चरित्र, गुण, विशेषताओं को उभारना रेखाचित्रकार का उद्देश्य होता है। वह जिस चरित्र को चुनता है उसकी मुद्राओं चेष्टाओं और बाह्य आकार प्रकार का चित्रात्मक वर्णन लेखक करता ही है। उसके साथ-साथ उसके आंतरिक हलचलों का भी सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत करता है।

रेखाचित्र लेखन में प्रमुख रूप से निम्नलिखित तत्वों का विचार आता है -

I) **यथार्थ अनुभूति :** सफल रेखाचित्रों का लेखक वही हो सकता है जिसने जीवन को भोगा हो। सफल रेखाचित्रकार जीवन को करीब से देखता है और उसकी गहराइयों में उतरता है। रेखाचित्र के लिए सूक्ष्म निरीक्षण तथा यथार्थ अनुभूति आवश्यक है। रेखाचित्र में कहानी के समान कलात्मक सजावट के लिए स्थान नहीं होता तथा विस्तार की भी कोई गुंजाइश नहीं होती। रेखाचित्रकार को अपनी स्मृति मैं अंकित वास्तविक रेखाओं को ही सजीव करता है। रेखाचित्रकार जिस कार्य विषय को प्रस्तुत करता है उससे उसका मर्मस्पर्शी अंतर संवेदन जरूरी होता है।

II) **संवेदनशील दृष्टि :** रेखाचित्र लेखन के लिए सहजता और संवेदनशीलता की आवश्यकता होती है। रेखाचित्रकार अपने परिपार्श्व से जितना ही प्रभाव ग्रहण कर सकेगा, जितनी ही प्रतिक्रिया उसमें होगी उतनी ही वास्तविकता के साथ वह अपने परिवेश को रेखाचित्रों में सजीव कर सकेगा। हिंदी के रेखाचित्रकारों में युग की परिवर्तित मान्यताओं के स्वरूप जाति, धर्म और धन की सीमाएं लांघकर उपेक्षित निर्धनों और अत्यंत साधारण लोगों को भी अपनी सहानुभूति प्रदान की है। हिंदी रेखाचित्रों के लिए यह शुभ दिशा है। युग की मांग यही है कि लेखक अपने हृदय की ममता एवं करुणा उन

उपेक्षितों को दे, जिन्होंने वास्तविक जीवन की आपदाओं को झेला है। फिर भी दर-दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर कर दिया है। रेखाचित्रकार अगर पाठक के हृदय में संवेदना जगाने में सफल हुआ तो वह रेखाचित्र सफल माना जा सकता है। वास्तव में रेखाचित्र का विषय इतना अनुभूत होता है कि उसकी शैली इतनी मर्मस्पर्शी होती है कि वह सीधे पाठक के हृदय को स्पर्श करता है।

III) **संतुलन और तटस्थता :** रेखा चित्रकार के लिए संतुलन और तटस्थता एक विशेष गुण है। अतिरंजित निंदा या अतिशयोक्ति, अति प्रशंसा आदि बातें रेखाचित्र के लिए बाधक हैं। चित्रांकन करते समय चरित्र के गुण दोषों पर संतुलित दृष्टि डालना उचित है। रेखाचित्रकार को भरसक उल्लेख घटनाओं का ही अंकन करना चाहिए। रेखाचित्रकार अपने संबंधों का उल्लेख करता है। यह उल्लेख करते हुए उसे आत्मप्रशंसा से बचना चाहिए। वस्तुतः उसका उद्देश्य तो यही होना चाहिए कि जिस चरित्र को वह उठाता है उसकी विशेषताओं का उद्घाटन हो। अतः रेखा चित्रांकन में तटस्थ दृष्टि जरूरी है। रेखाचित्रकार का कार्य किसी चरित्र की आरती उतारना नहीं है बल्कि उस चरित्र की उजली और काली रेखाओं को उभारना है, जिन्होंने उसके अंतर को स्पष्ट किया है और जो उसे वास्तविक और सजीव बनाता है।

IV) **सूक्ष्म निरीक्षण और चित्रात्मकता :** सफल रेखाचित्रों में चित्रण की बारीकी और विश्लेषण की सूक्ष्मता का होना जरूरी है। रेखाचित्र में चरित्र का महत्व सबसे अधिक होता है। अधिकांश चरित्रों में कोई न कोई व्यक्ति ही विषय होता है, जिसकी चरित्रांकन विशेषताओं को उभरना ही रेखाचित्रकार का लक्ष्य होता है। ऐसी स्थिति में उस चरित्र के बाह्य रूप रंग, उसकी मुद्राओं चेष्टाओं एवं उसकी मानसिक हलचलों का चित्रण रेखाचित्रकार के लिए आवश्यक है। जिस प्रकार विभिन्न रंगों के अनुपात से तूलिका चित्र सजीव हो जाता है। उसी प्रकार मानव की आकृति उसके अंग विक्षेप तथा उसके स्वभाव वैशिष्ट्य से शब्दों का रेखाचित्र हो उठता है। सूक्ष्म निरीक्षण रेखाचित्र का प्राण तत्व है। निरीक्षण जितना सूक्ष्म, पारदर्शी होगा चित्र उतना ही आकर्षक एवं प्रभावशाली होगा।

V) **उद्देश्य :** रेखाचित्र का प्रमुख उद्देश्य चरित्र को सजीवता से स्पष्ट करके हृदय परिष्का, धारणा परिवर्तन, उदारता का विकास, लोकहृदय का निर्माण, न्याय के प्रति जागरूकता, चेतना, दु:खियों के प्रति करूणा आदि के भाव जगाना है। इस प्रकार से प्रेम और सहानुभूति पूर्ण जीवन का आदर्श स्थापित करना और जीवन वास्तविक रूपों और अनुभवों में रस लेना ये रेखाचित्र का प्रमुख उद्देश्य है।

रेखाचित्रकार का प्रमुख उद्देश्य अपने जीवित रेखाओं द्वारा पाठक में संवेदना जागृत करना ही होता है। रेखाचित्रों में उसके अनुभूति जीवन का सत्य, मर्म का संस्पर्श करता है, जो कुल मिलाकर पाठक पर प्रभाव छोड़ जाता है।

VI) **शैली :** गद्य की अन्य विधाओं की तरह रेखाचित्र में भी कथात्मक, वर्णनात्मक, भावात्मक, विचारात्मक आदि शैलियाँ होती हैं |

४.७ संस्मरण :

डॉ. चंद्रावती सिंह ने संस्करण के बारे में अपने हिंदी साहित्य में 'जीवन चरित्र का विकास' ग्रंथ में कहा है कि "जीवन की बहुत सी बातों में, संसार की हलचलों में, दफ्तर की किसी कार्यवाही में या सभा में जो समय-समय पर बातें घटी हैं, उनका अलग-अलग वर्ण संस्मरण कहा जा सकता है।"

डॉ. गोविंद त्रिगुणायक ने शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धांत ग्रंथ में कहा है कि "भावुक कलाकार जब अतीत की अनंत स्मृतियों में से कुछ रमणीय अनुभूतियों को अपनी कोमल कल्पना से अतिरंजित कर व्यंजना मूलक संकेत शैली में अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं से विशिष्ट कर रोचक ढंग से यथार्थ रूप में व्यक्त कर देता है, तब उसे संस्मरण कहते हैं।"

संस्मरण के स्वरूप को समझने के लिए उनके तत्वों का अध्ययन करना जरूरी है -

संस्मरण के तत्व :-

I) **वर्ण्य विषय:** संस्मरणकार के मन में अपने युग का एक चित्र होता है। वह अपने समय के इतिहास को मूर्त करना चाहता है। इतिहासकार से उसकी दृष्टि भिन्न होती है। इतिहासकार वस्तुपरक दृष्टि से अपना अध्ययन प्रस्तुत करता है, जबकि संस्मरण लेखन अपने अनुभवों का भी वर्णन करता है। उसे इतिहासकार के समान तटस्थ रहना नहीं आता। वह अपने अंतरंग भावों को भी लिखता है। अपने वैयक्तिक अनुभवों को वह विशिष्ट व्यक्तियों, वस्तुओं अथवा क्रियाकलापों के चित्रण के माध्यम से व्यक्त करता है।

II) **यथार्थ का चित्रण :** लेखन में यथार्थ का चित्रण भावना की गहनता के साथ प्रस्तुत किया जाता है। व्यक्ति से अधिक वर्णित घटना अथवा व्यवहार को आकर्षित ढंग से प्रस्तुत करना ही संस्मरण लेखक का ध्येय होता है | इस वर्णन के माध्यम से संस्मरण लेखक संस्मरण्य विषय के जीवन के सर्वाधिक महत्वपूर्ण या अबतक अज्ञात ऐसी किन्ही तथ्यों का साक्षात्कार करना चाहता है। संस्मरण्य के जीवन के जिस अंश को संस्मरण का विषय बनाया जाता है वह स्वयं लेखक के भी जीवनादर्श का सूचक होता है।

III) **पात्र एवं चरित्र चित्रण :** संस्मरण में प्रमुख रूप से स्त्री तथा पुरुष पात्र इस प्रकार से पात्रों की चर्चा आती है। बहुदा संस्मरण लेखक और उनके द्वारा चित्रित पात्र दोनों महान होते हैं। वैसे यह कोई सर्व सामान्य नहीं है। सामान्य व्यक्ति महान व्यक्ति के संबंध में संस्मरण लिख सकता है या फिर महान व्यक्ति सामान्य व्यक्ति के संबंध में भी लिख सकता है। पहले प्रकार के उदाहरण आधुनिक युग में महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, आचार्य विनोबा भावे इनके संबंध में अनेक छोटे कार्यकर्ताओं ने तथा सामान्य से लगने वाले आश्रमवासियों ने संस्मरण लिखे हैं।

दूसरे प्रकार के उदाहरण इन्ही महान व्यक्तियों द्वारा अपने निकट संपर्क में आए हुए अपने से सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों के संबंध में लिखे गए संस्मरण मिलते हैं। जब

सामान्य योग्यता के महापुरुष अथवा कला एवं साहित्य के महारथी संस्मरण लिखते हैं तब संस्मरण्य व्यक्ति के जीवन के अनेक रहस्यपूर्ण दालान आलोकित हो उठते हैं।

IV) **परिवेश :** लेखक अपने समय की उपज होता है उसका चिंतन अपने परिवेश से जुड़ा हुआ होता है। संस्मरणकार इस काल विशेष के पात्रों के संबंध में अपना लेखन करता है उस काल की युगीन परिस्थिति का यथातथ्य रूप उसके लेखन में झलकता है। युग का अपना एक प्रभाव होता है, उस प्रभाव के प्रकाश में उस काल के चरित्र भाषा एवं पूरा परिवेश राह खोजता है। विशिष्ट युग में विशिष्ट क्षमता या फिर अक्षमता से भरे हुए पात्र कार्यान्वित होते हुए चरित्र का प्रेरणा स्थल तत्कालीन युग होता है। चरित्र युग से प्रभाव ग्रहण करता है और युग को प्रभावित भी करता है।

V) **उद्देश्य :** साहित्य का उद्देश्य ज्ञान और मनोरंजन होता है। संस्मरणकार इसके साथ-साथ युगीन बोध का परिपूर्ण आकलन प्रस्तुत करने का भी कार्य करता है। बहुत बार संस्मरण लेखक अपने जीवन के भी अंशों को लेखन में प्रस्तुति देता है संस्मरण्य चरित्र की गुण संपदा को उजागर कर पाठक को बल प्रदान करने का उद्देश्य संस्मरण लेखक का मुख्य सूत्र है।

VI) **शैली :** संस्मरण लेखक की कई शैलियां हैं विद्वानों के मतानुसार निम्नलिखित शैलियों या अभिव्यक्ति पद्धतियाँ हो सकती हैं -

- आत्मकथात्मक शैली
- निबंधात्मक शैली
- पत्रात्मक शैली
- डायरी शैली

४.८ जीवनी:

इस विधा को हिंदी में 'जीवनी', मराठी में 'चरित्र' तथा अंग्रेजी में 'बायोग्राफी' कहते हैं। आत्मकथा में व्यक्ति स्वयं अपनी कहानी अपने शब्दों में कहता है। परंतु जीवनी में दूसरा व्यक्ति किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के संपूर्ण जीवन को अपने शब्दों में कहता है।

जीवनी की परिभाषा :

- जीवनी व्यक्ति विशेष के जीवन और चरित्र की रसात्मक अभिव्यक्ति है।
- जीवनी किसी व्यक्ति की बाह्य और सूक्ष्म व्यक्तित्व की यथार्थ परख अनुभूति का एकात्मक मूल्यांकन है।
- जब कोई लेखक वास्तविक घटनाओं के आधार पर श्रद्धेय व्यक्ति के जीवन चरित्र को कलात्मक रूप में प्रस्तुत करता है तो साहित्य का वह रूप जीवनी कहलाता है।
- किसी व्यक्ति विशेष के जीवन वृतांत को जीवनी कहते हैं।

जीवनी के तत्व :

१. **वर्ण्य विषय :** इसके अंतर्गत लेखक के नायक का विश्लेषण होता है। नायक के चरित्र का वास्तविक घटनाओं के आधार पर संश्लेषण, विवेचन एवं विश्लेषण कलात्मक रूप से प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ चरित्र नायक का चुनाव लेखक अपनी रुचि तथा इच्छा के अनुसार कर सकता है। अक्सर जीवनियाँ उन्हीं पर लिखी गई हैं जिन्होंने जीवन के किसी क्षेत्र में विशेष कार्य किया हो, अथवा समाज या राष्ट्र के लिए समर्पित हुए हो। परंतु इन दिनों इसे भी आवश्यक नहीं माना जाता, यह जरूरी भी नहीं है। व्यक्ति कोई भी हो सकता है। पर ऐसा चरित्र होना चाहिए जिसका जीवन-चरित्र पढ़ने से पाठक को कुछ प्रेरणा मिल सकें। अथवा वे विशिष्ट ज्ञान ग्रहण कर सकें। जिस किसी पर भी वह लिखे उस विषय के संबंध में विस्तृत जानकारी प्राप्त करें, यह उम्मीद लेखक से होती है।

२. **चरित्र :** वर्ण्य विषय और चरित्र यहाँ एक ही होते हैं परंतु अध्ययन की सुविधा के लिए इनमें अंतर किया जाता है। जीवनी में घटनाओं का अंकन नहीं होता वरन चरित्र होता है। अपने चरित नायक का चित्रण वह दो पद्धति से करता है -

- **चरित नायक का बाह्य व्यक्तित्व:** इसके अंतर्गत जीवनी का अपने नायक के शरीर का, उसकी वेशभूषा का, उसके रहन-सहन का, खानपान का, उसकी कला प्रियता का वर्णन करता है।

- **चरित नायक का आंतरिक विश्लेषण:** इसके अंतर्गत नायक के स्वभाव का उसके अंतर्द्वन्द्वों का, उसके विश्वासों, अंधविश्वासों का, मूल्यों के प्रति उसकी प्रतिबद्धता का वर्णन विश्लेषण करता है। वास्तव में इस वर्णन में ही जीवनी कार की सारी प्रतिभा का दर्शन होता है। आंतरिक जीवन का यह विश्लेषण अत्यंत यथार्थ वास्तविक तथा रोचक हो यह शर्त तो है ही, केवल इतना ही नहीं वह अपने चरित्र नायक के दोषों का, उसके स्वभाव की सीमाओं का, उसकी दुर्बलताओं का भी चित्रण करे ऐसी अपेक्षा होती है।

३. **परिवेश देशकाल :** चरित्र नायक किसी विशिष्ट काल में जीते हैं। वह काल तथा उस काल की प्रस्थापित व्यवस्था उसके व्यक्तित्व को आधार देती रहती है अथवा बाधाएं पैदा करती रहती है। इस कारण उस काल का उस परिवेश का विवेचन विश्लेषण जरूरी हो जाता है। परिवेश के अंतर्गत परिवार, पड़ोसी, मित्र, शत्रु, तत्कालीन राजनीति, अर्थनीति, धर्म, कर्मकांड आदि अनेक बातों का समावेश होता है। अर्थात जीवनी का इनमें से उन्हीं इकाइयों को बुनेगा जिन्होंने चरित नायक को प्रभावित किया हो अथवा बाधाएं उपस्थित की हो।

४. **उद्देश्य :** जीवनी लेखन उद्देश्यपूर्ण ही होता है आनेवाली पीढ़ी को संस्कारित करने के लिए ही जीवनियाँ लिखी जाती हैं। क्रांतिकारियों को, समाज सुधार को, वैज्ञानिकों, खिलाड़ियों, लेखकों, उद्योगपतियों आदि की जीवनी या आकाशदीप की तरह आनेवाली पीढ़ी का मार्गदर्शक करती रहती हैं। इसलिए इनकी जीवनियाँ उपर्युक्त उद्देश्यों को ध्यान में रखकर ही लिखी जाती हैं। इन दिनों समाज के उपेक्षितों की जीवनियाँ लिखी जा रही हैं। ऐसी जीवनियों का उद्देश्य भी स्पष्ट है। विषमतापूर्ण समाज

व्यवस्था के कारण समाज के किसी तबके को कितनी भयावह यातनाएं भी झेलनी पड़ती हैं। इसे स्पष्ट करना ऐसी जीवनियों का उद्देश्य होता है।

५. **भाषा शैली :** 'शैली' विषय को सजाने के उन तरीकों का नाम है जो उस विषय की अभिव्यक्ति को सुंदर और प्रभावपूर्ण बनाते हैं। जीवनी लेखक के पास चरित्र नायक के संबंध में लिखित अलिखित ऐसी काफी साधन सामग्री इकट्ठी हुई है अब उसे पूरी सामग्री को इस कौशल से सजाना है कि चरित नायक पाठक के मन में सीधे घर कर ले | जीवनी की शैली की अपनी कुछ विशेषताएं हैं और वे इस प्रकार हैं -

- शैली को सुसंगठित हो। उनमें सुसूश्रता हो।
- शैली सरल सीधी परंतु अत्यंत आकर्षक हो।
- भाषा पारदर्शी तथा चरित नायक के व्यक्तित्व से मिलती-जुलती हो।
- भाषा सरल सुबोध आकर्षक और रुचिकर हो प्रसाद गुण से युक्त हो।

४.९ आत्मकथा :

आत्मकथा की परिभाषा :

१. आत्मकथा व्यक्ति के जिए हुए जीवन का ब्योरा है जो कि स्वयं उसके द्वारा लिखा जाता है।

२. जे. टी. शिले "आत्मकथा मूलतः लेखक के जीवन का सातस्यपूर्ण विवरण होता है जिसमें मुख्य बल आत्मनिरीक्षण और अपने जीवन की सार्थकता को बाह्य परिवेश में प्रस्तुत करने पर होता है।"

३. अमृता प्रीतम "आत्मकथा लेखक की अपनी आवश्यकता होती है। यथार्थ से यथार्थ तक पहुंचने की यह प्रक्रिया है।"

४. "आत्मकथा व्यक्ति जीवन के सत्य का दस्तावेज है, जिसे स्वयं वह व्यक्ति ही पूर्ण कृति के रूप में लिखता है।"

आत्मकथा के तत्व :

१. **घटनाओं का चुनाव :** आत्मकथा में घटनाओं के चुनाव का अत्यधिक महत्व होता है। जीवन में घटित प्रत्येक घटना का विवरण आत्मकथा नहीं है। इस प्रकार के विवरण से आत्मकथा अत्यंत नीरस हो जाएगी। जीवन में घटित घटनाओं का चुनाव करते समय आधार रूप में उसे अपने वर्तमान को स्वीकार करना पड़ता है। जीवन के घटना प्रसंगों का पृथक्करण फिर अनिवार्य प्रसंगों का चुनाव और विश्लेषण उसे करना पड़ता है। ऐसी घटनाओं को ही चुनना चाहिए जिसमें उसके व्यक्तित्व को एक नई दिशा प्राप्त हो गई थी। आत्मकथा में उसका अपना व्यक्तित्व केंद्र में होता है। उसके इस व्यक्तित्व को नई दिशा देनेवाली अथवा बिगाड़नेवाली घटनाओं को ही उसे चुनना चाहिए।

आत्मकथा में वर्तमान और अतीत बोध में निरंतर द्वन्द्व होता है मैंने जो जीवन जिया जो अनुभव पाए उनमें से कौन से पाठकों के सम्मुख रखूँ इस द्वन्द्व से आत्मकथाकार गुजरता है। वर्तमान की दृष्टि से जो महत्वपूर्ण अनुभव है उन्हें ही वह चुने यह आग्रह तो होगा ही।

२. **परिवेश :** आत्मकथा में परिवेश का अपना महत्व होता है, क्योंकि यह परिवेश ही उसके व्यक्तित्व को आकार देता रहता है। इस परिवेश का यथार्थ और सूक्ष्म में चित्रण आत्मकथा में अपेक्षित है। परिवेश के अंतर्गत तत्कालीन समाज व्यवस्था, परिवार के सदस्य, मित्र, गुरुजन, विद्यालय, वहाँ के संस्कार, श्रद्धा-अंधश्रद्धा, धार्मिक कर्मकांड, तत्कालीन राजनीतिक, आर्थिक स्थितियां अर्थात ये सभी इकाइयां जो एक व्यक्तित्व को आकार देने में सहायक होती हैं। इनके अलावा जीवन में घटित विविध घटनाएं, आए हुए कटु अनुभव, मान-अपमान, विविध प्रकार के संघर्ष, संकट, प्रेरणाएं आदि सभी कुछ का समावेश इसमें किया जा सकता है।

इस संपूर्ण परिवेश को उसकी पूरी यथार्थता के साथ चित्रित किया जाए ऐसी अपेक्षा होती है। कल्पना, अतिशयोक्ति अथवा छूट को यहाँ किसी भी प्रकार का स्थान नहीं है। इसलिए यह यथार्थ से यथार्थ तक की यात्रा है।

३. **आत्मविश्लेषण :** यह परिवेश के विश्लेषण के साथ-साथ आत्मविश्लेषण भी है। आत्मकथाकार को पूरी तटस्थता और निर्भयता के साथ अपनी बीती हुई जिंदगी की ओर देखना पड़ता है। भावुकता से यहाँ काम नहीं चलता अपनी बीती हुई जिंदगी का निर्भयता के साथ किया गया यह पर्दाफाश है। पूरी प्रामाणिकता के साथ अपने बीते जीवन की परतें निकालकर दिखानी पड़ती हैं। वर्तमान में जीता हुआ व्यक्ति पूरी तटस्थता के साथ अपने भूतकाल को देखें जैसे जीवन जिया वैसे उसे प्रस्तुत करें ऐसी अपेक्षा उससे होती है।

४. **कलात्मकता :** आत्मकथा अंततः एक साहित्यिक विधा है इस कारण उसे कलात्मकता की आवश्यकता होती है यह कलात्मकता दो स्तरों पर होनी चाहिए।
i. चयन के स्तर पर।

ii. अभिव्यक्ति के स्तर पर।

रूखी-सूखी घटनाओं की अपेक्षा नाट्यमय घटनाएं हैं तो वह अधिक पठनीय हो सकती हैं। अथवा अनुभूति का नया संसार हो। जीवन के विशिष्ट भयावह अथवा अत्यंत सुखमय ऐसे अनुभव को वह चुने ऐसे अनुभव जो मौलिक नहीं और सर्वथा अपने हों।

५. **शैली :** आत्मकथा की शैली भी आकर्षक गतिशील यथार्थ तरल तथा पठनीय हो शैली पर लेखक के व्यक्तित्व की अमिट छाप हो। शैली गंभीर तथा अंत:जगत का विश्लेषण करने में समर्थ हो, भाषा अत्यंत पारदर्शी, तरल, बोधगम्य तथा सहजता से युक्त हो।

४.१० सारांश :

हिंदी साहित्य के विकास में गद्य विधाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहा है गद्य का वर्तमान अधुनातन स्वरूप अधिक बौद्धिक है। अर्थ-ग्रहण में ध्वनि और लाक्षणिकता की प्रधानता है। व्यंग्य परिहास की तीक्ष्णता भी कम नहीं है। वर्तमान युग में गद्य का क्षेत्र इतना व्यापक हो गया है कि पद्य भी गद्य से त्रस्त है। सामयिक पत्र-पत्रिकाओं के प्रभूत चलन के कारण गद्य के विकास की असीम संभावनाएं हैं।

हिंदी साहित्य में गद्य का प्रारंभ जितना सरल था आज उसकी गति उतनी ही तीव्र और जटिल है। उसकी अभिव्यक्ति में इतना विस्तार हुआ है कि स्वतंत्र भारत की राजभाषा बनने की उसकी अर्हता सर्वाधिक सुनिश्चित है।

४.११ लघुत्तरीय प्रश्न :

१. खड़ी बोली गद्य के प्रथम दर्शन किस ग्रंथ में होते हैं?

२. हिंदी गद्य का वास्तविक इतिहास कब से आरंभ हुआ?

३. भारतेंदु युग में किन गद्य विधाओं का विकास हुआ?

४. आलोचना द्वारा गद्य साहित्य को नई दिशा किस लेखक ने प्रदान की?

५. शुक्लोत्तर युग की समय सीमा बताइए?

४.१२ वैकल्पिक प्रश्न :

१. बाबू गुलाबराय की आत्मकथा है?

अ) कुछ आप बीती कुछ जग बीती   ब) मेरा जीवन प्रवाह

क) मेरी असफलताएं   ड) अपनी खबर

२. निस्सहाय हिंदू रचना है?

अ) राधाकृष्ण दास   ब) बालकष्ण भट्ट

क) श्रीनिवास दास   ड) भारतेंदु हरिश्चंद्र

३. आवारा मसीहा किस गद्य विधा की रचना है?

अ) उपन्यास ब) कहानी क) नाटक ड) जीवनी

४. निम्नलिखित रचनाओं में से कौन सी रचना कहानी है?

अ) त्यागपत्र, ब) भाग्य और पुरुषार्थ, क) पुरस्कार, ड) आन का मान

५. 'अंबपाली' किस विधा की रचना है?

अ) कहानी, ब) उपन्यास क) नाटक ड) संस्मरण

४.१३ बोध प्रश्न :

१. उपन्यास का स्वरूप और उसके तत्वों पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

२. कहानी की परिभाषा देते हुए तत्वों को रेखांकित कीजिए।

३. रेखाचित्र का परिचय देकर तात्त्विक विवेचन कीजिए।

४.१४ संदर्भ ग्रंथ :

१. हिन्दी का उद्भव (केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय)

२. हिन्दी साहित्य का इतिहास (गूगल पुस्तक ; लेखक - श्याम चन्द्र कपूर)

३. आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास (गूगल पुस्तक; लेखक - बच्चन सिंह)

४. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास (गूगल पुस्तक ; लेखक - बच्चन सिंह)

५. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (प्रथम खण्ड) (गूगल पुस्तक ; लेखक - गणपतिचन्द्र गुप्त)

६. हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, खण्ड-२ (गूगल पुस्तक ; लेखक - गणपतिचन्द्र गुप्त)

७. हिन्दी का प्रथम आत्मचरित् अर्द्ध-कथानक - एक अनुशीलन [मृत कड़ियाँ]

८. History of the Hindi Language (हिन्दी सोसायटी, सिंगापुर)

९. हिन्दी साहित्य का इतिहास (गूगल पुस्तक ; लेखक - श्यामसुन्दर कपूर)

१०. हिन्दी साहित्य प्रश्नोत्तरी (गूगल पुस्तक)

११. रहस्यवादी जैन अपभ्रंश काव्य का हिन्दी पर प्रभाव (गूगल पुस्तक ; लेखक - प्रेमचन्द्र जैन)

१२. भारत के प्राचीन भाषा-परिवार और हिन्दी (गूगल पुस्तक ; लेखक - रामविलास शर्मा)

१३. हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास (गूगल पुस्तक ; लेखक - सुमन राजे)

१४. Hindustani Textbooks from the Raj

१५. भारतेन्दु युग और हिन्दी भाषा की विकास परम्परा (गूगल पुस्तक ; लेखक - डॉ. राम विलास शर्मा)

१६. हिन्दी भाषा, इतिहास और स्वरूप (गूगल पुस्तक ; लेखक - राजमणि शर्मा)

१७. हिन्दी साहित्य का इतिहास : नये विचार, नई दृष्टि (गूगल पुस्तक ; सम्पादक - डॉ सुरेश चन्द्र)

१८. संस्कृत से खड़ीबोली तक का सफर (डॉ. काजल बाजपेयी)

❄❄❄❄❄❄❄

५

अलंकार सामान्य परिचय, लक्षण एवं उदाहरण

इकाई की रूपरेखा

५.० इकाई का उद्देश्य

५.१ प्रस्तावना

५.२ अलंकार : शब्दालंकार

५.३ अलंकार : अर्थालंकार

५.४ सारांश

५.५ बोध प्रश्न

५.६ वैकल्पिक प्रश्न

५.७ लघुत्तरीय प्रश्न

५.८ संदर्भ ग्रंथ

५.० इकाई का उद्देश्य : -

प्रस्तुत पाठ के अध्ययन से विद्यार्थी निम्लिखित मुद्दों से परिचित हो सकेंगे -

- इस इकाई द्वारा विद्यार्थियों को अलंकार का सामान्य परिचय तथा अलंकार के लक्षणों की जानकारी प्राप्त होगी।
- शब्दालंकार के भेदों का सोदाहरण परिचय मिलेगा।
- अर्थालंकार के भेदों का सोदाहरण परिचय प्राप्त होगा।

५.१ प्रस्तावना :

अलंकार शब्द का शाब्दिक अर्थ होता है 'आभूषण यानी गहना', किंतु शब्द निर्माण के आधार पर अलंकार शब्द 'अलम' और 'कार' दो शब्दों के योग से बना है | 'अलम' का अर्थ है 'शोभा' तथा 'कार' का अर्थ है 'करने वाला'। अर्थात काव्य की शोभा बढ़ाने वाला तथा उसके शब्दों एवं अर्थों की सुंदरता में वृद्धि करके चमत्कार उत्पन्न करने वाले कारकों को अलंकार कहते हैं। अलंकार के मुख्यतः दो भेद माने जाते हैं शब्दालंकार और अर्थालंकार ।

५.२ अलंकार : शब्दालंकार

जहाँ पर अलंकार का चमत्कार अर्थ पर निर्भर ना होकर शब्द पर निर्भर करता है, वहाँ पर शब्दालंकार होता है। कवि कविता में शब्दों की योजना इस प्रकार करता है कि रचना में लालित्य आ जाए। कभी-कभी समान ध्वनियों का अनेक बार प्रयोग करते हैं, तो कभी समान शब्दों का अनेक बार प्रयोग कर रचना में सौंदर्य सृष्टि करते हैं। तो कभी अनेकाधिक शब्दों का

इस प्रकार प्रयोग करते हैं जिससे कि अनेक वाच्यार्थों का बोधशब्द चमत्कार का कारण होता है। इस आधार पर आचार्यों ने शब्दालंकारों के अनेक भेद किए हैं जो निम्न प्रकार से हैं -

i. **अनुप्रास :** अनुप्रास का अर्थ होता है वर्णों का बार-बार प्रयोग। समान वर्णों या शब्दों की आवृत्ति होने पर अनुप्रास अलंकार होता है। उदाहरण :

"गरज गगन के गाँव, गरज गंभीर का स्वरों में।"

उपर्युक्त पंक्तियों में 'ग' वर्ण का बार-बार प्रयोग हुआ है अतः यहाँ पर अनुप्रास अलंकार है।

ii. **यमक :** जहाँ भिन्न-भिन्न अर्थों को प्रकट करने वाले समान शब्द या वाक्य की आवृत्ति हो वहाँ पर यमक अलंकार होता है | जैसे -

"कनक-कनक ते सौ गुनी, मादकता अधिकाय।

यह खाए बौराए नर, वह पाए बौराय।।"

- बिहारी

उपर्युक्त पद में कनक वर्ण समुदाय की दो बार आवृत्ति की गई है किंतु भिन्न-भिन्न अर्थों में। पहले 'कनक' शब्द का अर्थ है 'धतूरा' और दूसरे 'कनक' शब्द का अर्थ है 'सोना'। अतः यहाँ पर यमक अलंकार है।

iii. **श्लेष :** जहाँ एक ही शब्द में एक से अधिक अर्थ बताकर चमत्कार उत्पन्न किया जाता है वहाँ श्लेष अलंकार होता है | जैसे -

"चिर जीवो जोरी जुरे, क्यों न सनेह गंभीर।

को घटि ये वृषभानुजा, वे हलधर के वीर।।"

इस दोहे में बिहारी ने राधा और कृष्ण की जोड़ी के साथ-साथ एक दूसरा अर्थ भी जोड़ दिया है - गाय और बैल की जोड़ी। 'वृषभानुजा और हलधर' के बीच इन दो अनेक अर्थ देने वाले शब्दों की सहायता से प्रकट होता है। 'वृषभानुजा' का एक अर्थ है वृषभानु की पुत्री, दूसरा अर्थ है - गाय (वृषभ+अनुजा)। ऐसा ही हलधर के वीर का एक अर्थ 'बलराम' हलधर के भाई अर्थात 'कृष्ण' और दूसरा अर्थ है हल धारण करने वाला बैल इसलिए वहाँ श्लेषा अलंकार है।

iv. **वक्रोक्ति :** जहाँ किसी उक्ति में वक्ता के अभिप्रेत आशय से भिन्न अर्थ की कल्पना की जाए वहाँ वक्रोक्ति अलंकार होता है | उदाहरण -

"एक कबूतर देख हाथ में पूछा कहाँ अपर है,

उसने कहा अपर कैसा?, उड़ है गया सपर है।"

उपर्युक्त पद्य में वक्ता को 'अपर' शब्द से 'दूसरा कबूतर' अभिप्रेत था किंतु श्रोता ने उसे उस रूप में ग्रहण न कर 'अपर' का 'पंख रहित' अर्थ ग्रहण कर जवाब यह अर्थ चमत्कार पूर्ण होने के कारण वक्रोक्ति अलंकार है।

v. **वीप्सा :** आदर, क्रोध, हर्ष, दुःख, विस्मय आदि भावों को प्रभावशाली बनाने अथवा भाषा में गति लाने के कारण शब्दों की पुनःआवृत्ति की जाती है। तब वहाँ वीप्सा अलंकार होता है। जैसे -

"रीझि-रीझि रहसि-रहसि हँसि-हँसि उठो।

संसि-भरि आँसु भरि कहत दई-दई।"

देवजी ने इस उदाहरण में अपने भावों को प्रकट करने के लिए एक या कई शब्दों को दो बार लिखा है ताकि काव्य में प्रभाव उत्पादकता बनी रहे। भावों को उचित ढंग से दिखाने के लिए वीप्सा अलंकार का प्रयोग होता है।

vi. **पुनरुक्ति प्रकाश :** जब किसी काव्य पंक्ति में एक ही शब्दों की निरंतर आवृत्ति होती हो, पर वहाँ अर्थ की भिन्नता नहीं होने के कारण वह पुनरुक्ति अलंकार माना गया है। साधारण अर्थों में समझें तो जब कवि भाव को रोचक व प्रभावशाली बनाने के लिए एक शब्द का अधिक बार समान अर्थ में प्रयोग करता है। वहाँ पुनरुक्ति अलंकार होता है। उदाहरण –

"सुबह सुबह बच्चे काम पर जा रहे हैं।"

५.३ अलंकार : अर्थालंकार

अर्थालंकार वहाँ होते हैं जहाँ अलंकार का सौंदर्य शब्द पर निर्भर ना होकर अर्थ पर निर्भर होता है उसे अर्थालंकार कहते हैं।

१. **उपमा :** जहाँ उपमेय और उपमान के बीच साम्य स्थापित किया जाता है। वहाँ उपमा अलंकार होता है। उपमा में चार तत्वों का होना आवश्यक है।

   a. **उपमेय :** जिस वस्तु का उपमान के साथ सादृश्य का वर्णन होता है, उस वस्तु को उपमेय कहते हैं।

   b. **उपमान :** जिस वस्तु के साथ उपमेय का सादृश्य बताया जाता है, वह वस्तु उपमान कहलाती है।

   c. **समानधर्म :** दोनों वस्तुओं (उपमेय और उपमान) में समान रूप से पाए जाने वाले धर्म का कथन समान धर्म कहलाता है।

   d. **वाचक शब्द :** उपमेय और उपमान को समान धर्म के साथ जोड़ने वाले शब्द को वाचक धर्म शब्द कहा जाता है।

उदाहरण - 'मुख्य चंद्रमा के समान सुंदर है।'

इस वाक्य में 'मुख' का 'चंद्रमा' के साथ सदृश्य बताया गया है। इसलिए मुख्य उपमेय है और चंद्रमा के साथ तुलना की जाने के कारण 'चंद्रमा' उपमान है। दोनों को सुंदरता के समान धर्म बताया गया है जो चंद्रमा के समान मुख में भी समाया है। अतः यहाँ 'सुंदर' शब्द समान धर्म है। इसी वाक्य के समान शब्द मुख और चंद्रमा को सुंदर के साथ जोड़ा जा रहा है। इसलिए इसे वाचक शब्द कहा जाएगा। समानता बताने के कारण इसे सादृश्य वाचन भी कह सकते हैं।

२. **रूपक :** जहाँ उपमेय और उपमान के बीच एकरूपता स्थापित की जाती है वहाँ रूपक अलंकार होता है। यहाँ साम्यवाचक पद नहीं होता। जैसे -

"इस मरण के पर्व को मैं आज दिवाली बना दूँ।"

इस पंक्ति में 'मरण के पर्व' उपमेय है और दिवाली उपमान है। दोनों के बीच एकरूपता स्थापित की गई है अतः यहाँ पर रूपक अलंकार है।

३. **अतिशयोक्ति :** अतिशयोक्ति का अर्थ है उक्ति की अतिशयता का अर्थात किसी कथन को सामान्य रूप में प्रस्तुत ना कर उसे बढ़ा चढ़ाकर प्रस्तुत किया जाए वहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार होता है।

उदाहरण -

"उठो उठो शोणित की धारें,

रोक नहीं पायेंगी पथ को।"

इस पंक्ति में यहाँ बड़ी से बड़ी आपत्तियाँ उपमेय को शोणित की धारें उपमान ने ग्रस लिया है। अतः यहाँ पर अतिशयोक्ति अलंकार है।

४. **उत्प्रेक्षा :** जहाँ उपमेय की उपमान के रूप में संभावना की जाती है वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। इस अलंकार में 'ज्यों', 'मानहुँ' आदि संभावना वाचक पदों का प्रयोग होता है। जैसे -

"रहे 'नर-नारि' ज्यों चितेरे चितसार हैं।"

यहाँ 'नर-नारि' उपमेय की उपमान 'चित्रशाला के चित्र' इस उपमान के रूप में संभावना की गई है। संभावना वाचक पद 'ज्यों' है। अतः इस पंक्ति में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

५. **विभावना :** जहाँ कारण के अभाव में भी कार्य की संपन्नता का वर्णन किया गया हो, वहाँ विभावना अलंकार होता है। यहाँ कारण के अभाव में कार्य की संपन्नता का विरोध है किंतु, उसके सत्य का अन्वेषण करते ही विरोध शांत हो जाता है और उसी में चमत्कार आ जाता है। उदाहरण -

"निंदक नियरे राखिये, आँगन कुटी छवाय।

बिन पानी साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।।

उपर्युक्त दोहे में पानी और साबुन जो वस्त्रादि मैल रहित करने के कारण उनके अभाव में चित्त के निर्मल होने का वर्णन किया गया है। अतः यहाँ पर विरोध की प्रतीति हुई किंतु निंदक के समीप रहने से वह व्यक्ति के दोष को प्रकट करेगा और संबद्ध व्यक्ति उन दोषों को जाकर उन्हें फलतः चित्त निर्मल हो जाएगा। इस ज्ञान के साथ ही विरोध का परिहार हो जाता है अछूत (पानी, साबुन) का शब्दों द्वारा कथन होने से यहाँ शाब्दी विभावना है।

६. **प्रतीप :** इसका अर्थ होता है उल्टा। उपमा के अंगों में उलटफेर करने से अर्थात उपमेय को उपमान के समान न कहकर उलट कर उपमान को ही उपमेय कहा जाता है, वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। इस अलंकार में दो वाक्य होते हैं, एक उपमेय वाक्य और एक उपमान। लेकिन इन दोनों वाक्यों में सदृश्य का साफ कथन नहीं होता, वह वंचित रहता है। इन दोनों में साधारण धर्म एक ही होता है परंतु उसे अलग-अलग ढंग से कहा जाता है। जैसे -

"नेत्र के समान कमल है।"

७. **दीपक :** जहाँ पर प्रस्तुत और अप्रस्तुत का एक ही धर्म स्थापित किया जाता है वहाँ पर दीपक अलंकार होता है। जैसे -

“चंचल निशी उदवस रहें, करत प्रात वसिराज।

अरविंदन में इंदिरा, सुंदरी नैनन लाज।”

८. **संदेह :** जहाँ पर उपमेय और उपमान के विषय में संदेह का चमत्कार पूर्ण वर्णन किया जाता है वहाँ पर संदेह अलंकार होता है।

सत्य का ज्ञान अनिश्चित ही संदेह अलंकार होता है। एक ऐसी स्थिति आती है अतिशय सादृश्य के कारण एक वस्तु में अन्य अनेक वस्तु का आभास होने लगता है और दर्शक इस ऊहापोह में रहता है कि, यह वस्तु यह है कि वह है। अनेक स्थलों पर दो विरोधी वस्तुओं में भी एक स्थल पर संदेह उत्पन्न हो जाता है। जैसे -

"यह पंडित है अथवा मूर्ख।" या

"वह जाएगा अथवा नहीं।"

यह स्थिति भी संदेश जनक होती है। सामान्य कथन में अलंकार न होगा। अतः संदेह की उक्ति का चमत्कार पूर्ण होना आवश्यक है | जैसे –

"किधौ रौद्ररस? रूद्र के, किधौ ओज अवतार।

साह सुवन शिवराज तैयार, किधौं प्रलय साकार।।"

- वीर सतसई

उपर्युक्त पंक्तियों में महाराष्ट्र के नायक शिवाजी महाराज के विषय में कार्यों के सदृश्य के कारण रौद्र रस, रूद्र (शंका) ओज के अवतार और साकार प्रलय के सुंदर संदेह का वर्णन किया गया है। अतः यहाँ पर संदेह अलंकार है।

९. **विरोधाभास :** जहाँ पर विरोध ना होने पर भी विरोध की प्रतीति (अनुभव) होती है। वहाँ पर विरोधाभास अलंकार होता है। कवि शब्दार्थ की योजना कुछ इस प्रकार करता है कि प्रथम दृष्या पदार्थ में विरोध प्रतीत होने लगता है। किंतु थोड़ा सा ध्यान देते ही विरोध शांत हो जाता है। यही उक्ति चमत्कार होती है। जैसे -

"तंत्रीनाद कवित्त रस, सरय राग रतिरंग।

अनबूड़े बूड़े, तिरे जो बूड़े सब रंग।।"

- बिहारी

उपर्युक्त दोहे में नीचे की पंक्तियाँ पढ़ते ही विरोध की प्रतीति होती है। क्योंकि कवि कहता है कि तंत्री के नाद आदि में जो व्यक्ति नहीं डूबा, वह डूब गया और जो व्यक्ति इन में डूब गया वह तिर गया। दोनों ही बातें विरोधमूलक हैं। किंतु यह ज्ञान होते ही कि जो व्यक्ति उपर्युक्त विधाओं का आनंद नहीं ले पाते (अनबूड़े) वे इस संसार सागर में डूब जाते हैं, अर्थात जीवन में सफल नहीं हो पाते और जो उपर्युक्त विधाओं में रस लेते हैं (जो बूड़े सब रंग) वे इस संसार सागर को पार कर लेते हैं। इस अर्थ का ज्ञान होते ही विरोध शांत हो जाता है।

५.४ सारांश

काव्य में भाषा को शब्दार्थ से सुसज्जित तथा सुन्दर बनाने वाले चमत्कारपूर्ण मनोरंजन ढंग को **अलंकार** कहते हैं। **अलंकार** का शाब्दिक अर्थ है, 'आभूषण'। जिस प्रकार सुवर्ण आदि के आभूषणों से शरीर की शोभा बढ़ती है उसी प्रकार काव्य अलंकारों से काव्य की। अलंकार को व्याकरण के अंदर उनके गुणों के आधार पर तीन हिस्सों में बांटा गया है। शब्दालंकार, अर्थालंकार, उभयालंकार।

५.५ बोध प्रश्न :

प्रश्न १. अलंकार का अर्थ समझाते हुए शब्दालंकार के भेदों की सोदाहरण चर्चा कीजिए।

प्रश्न २. अर्थालंकार के किन्ही पाँच भेदों पर सोदाहरण प्रकाश डालिए।

५.६ वैकल्पिक प्रश्न

प्रश्न १ . “सो सुख सुजस सुलभ मोहि स्वामी” में कौन सा अलंकार है ?

१) उत्प्रेक्षा   २) रूपक   ३) अनुप्रास   ४) व्यतिरेक

प्रश्न २. “कनक कनक ते सौ गुनी मादकता अधिकाय” में कौन सा अलंकार है ?

१) यमक   २) व्यतिरेक   ३) रूपक   ४) श्लेषा

प्रश्न ३. “पत्रा ही तिथि पाइयै वा घर कैं चहुँ पास। नितप्रति पून्यौई रहै आनन-ओप-उजास॥”

बिहारी जी के दोहे में कौन सा अलंकार है पहचानिए ?

१) अतिशयोक्ति २) संदेहा ३) प्रतीप ४) दीपक

प्रश्न ४. “यह काया है या शेष उसी की छाया, क्षण भर उनकी कुछ नहीं समझ में आया।”

यह कौन सा अलंकार है।

१) दीपक २) प्रतीप ३) आतिशयोक्ति ४) संदेह

प्रश्न ५. "छाया है माथे पर आशीर्वाद – सा" पंक्ति में अलंकार पहचानिए ?

१) पुनरुक्ति २) अनुप्रास ३) उपमा ४) श्लेषा

५.७ लघुत्तरीय प्रश्न :

प्रश्न १. शब्दालंकार कितने प्रकार के होते हैं?

प्रश्न २. अलंकार के कितने भेद होते है ?

प्रश्न ३. संदेह अलंकार में किसका चमत्कार पूर्ण वर्णन किया जाता है?

प्रश्न ४. किस अलंकार का अर्थ उलटा होता है?

५.८ संदर्भ ग्रंथ :

१. अलंकार मंजरी – कन्हैयालाल प्रकाश

२. हिन्दी अलंकार साहित्य – डॉ. ओम प्रकाश

३. अलंकार परिचय – डॉ. शिप्रा प्रभा

४. श्रेष्ठ निबंध – आचार्य रामचंद्र शुक्ल

५. नए निबंध – श्यामजी गोकुल वर्मा

६. आधुनिक हिन्दी – निबंध - डॉ. त्रिलोकीनारायण दीक्षित

❄❄❄❄❄❄❄